प्रौढ़ शिक्षा

जुलाई–सितम्बर 2017
वर्ष 61 अंक–3

सम्पादक मण्डल

प्रो. भवानीशंकर गर्ग
(संरक्षक)

श्री मृणाल पंत
श्री ए.एच.खान
डा. सरोज गर्ग
श्री दुर्लभ चेतिया
डा. डी.के.वर्मा
डा. उषा राय
डा. मदन सिंह
श्री एस.सी. खंडेलवाल
श्री राजेन्द्र जोशी

प्रधान संपादक
श्री कैलाश चौधरी

सम्पादक
डा. मदन सिंह

सहायक सम्पादक
बी. संजय

इस अंक में

सम्पादकीय

कला स्नातक के हिन्दी साहित्य विषय पर विकसित स्व–अनुदेशन सामग्री की परम्परागत शिक्षण विधि से प्रभाविता का विद्यार्थियों की उपलब्धि एवं प्रतिक्रियाओं के संदर्भ में अध्ययन
– एच. आर. पाल
– संतोष एस्के 5

निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम वंचित वर्ग और निजी शिक्षण संस्थाओं के लिए एक सार्थक पहल
–दीपक कुमार योगी 23

नई तालीम 27

अधिगम स्तर आकलन : एक प्रभावी नवाचार
–उमेश चमोला 30

शास्त्र ही महिलाओं का शस्त्र है
–रत्ना गुप्ता 35

शुद्धवाचन में उच्चारण शिक्षण की भूमिका
–वीरेन्द्र जैन 39

हमारे लेखक 44

मूल्यः रूपये 200/–वार्षिक

पत्रिका में व्यक्त लेखकों के विचार उनके वैयक्तिक विचार हैं, जिनके लिए संघ एवं सम्पादक की सहमति अनिवार्य नहीं है ।

सड़ गई जो रीति–रस्में छोड़कर आगे बढ़े हम

ईश्वर की वाणी तथा उस वाणी के आधार पर विकसित आदेशों, आग्रहों अथवा दुराग्रहों की सच्चाई और व्याप पर सदा से विवाद रहा है। तमाम सभ्यताओं, संस्कृतियों एवं धर्मों ने ईश्वर के स्वरुप तथा उसकी वाणी को अलग–अलग ढंग से निरुपित किया है। इस निरुपण के अनुरुप ही विश्व के अलग–अलग समाजों में अलग–अलग रीति–रिवाज तथा रस्म विकसित हुए हैं। इनमें से कुछ रीति–रिवाज तथा रस्में अपनी व्यापक स्वीकार्यता के कारण संबंधित सभ्यताओं, संस्कृतियों एवं धर्मों के अस्तित्व के पर्याय से बन गए। पर इनमें से शायद ही कोई ऐसा रीति–रिवाज अथवा रस्म रहा होगा जिसे समय के किसी दौर में सम्पूर्ण मानव समाज ने एकरुप अपनाया होगा। सच तो यह है कि डार्विन के 'योग्यतम की उत्तरजीविता' का सिद्धान्त यहां भी लागू प्रतीत होता है। इतिहास गवाह है कि वे रीति–रिवाज तथा रस्में जो समाज के विकास में लगातार बाधक साबित होती रहीं सभी समाजों ने किसी न किसी दौर में उनसे अपना पीछा छुड़ा लिया।

भारतीय समाज को सती प्रथा से मुक्ति दिलाने में राजा राममोहन राय, बाल विवाह से निजात दिलाने में पंडित ईश्वर चन्द्र विद्यासागर, कर्मकाण्ड के जंजाल से बृहत्तर हिन्दू समाज को मुक्ति दिलाने में स्वामी दयानंद सरस्वती, आदि के संघर्षों को कौन नहीं जानता?

वस्तुतः समाज एक जीवंत इकाई है जिसमें सकारात्मक और नकारात्मक दोनों ही कारक एवं शक्तियां समान रुप से विद्यमान रहती हैं। सकारात्मक शक्तियां जहां समाज को उतरोत्तर विकास के मार्ग पर आगे बढ़ाने के लिए प्रयत्नशील रहती हैं वहीं, नकारात्मक शक्तियां उसमें तमाम प्रकार के विकार उत्पन्न करती हैं। वह समाज प्रगतिशील समाज कहा जाता है जो अपने अन्दर के विकारों से संघर्ष करता हुआ उससे स्वयं को मुक्त कर लेता है। स्वाधीन भारत के इतिहास पर गौर करें तो पता चलता है कि बात चाहे किसी भी धर्म की हो, आधुनिक भारतीय समाज के बदलाव एवं विकास में न्यायालयों द्वारा दी गई वैधानिक निर्णयों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। 22 अगस्त 2017 को सर्वोच्च न्यायालय द्वारा तीन तलाक और निकाह हलाला के मामले में दिया गया ऐतिहासिक फैसला इसका नवीनतम उदाहरण है। विदित है कि उत्तराखण्ड के काशीपुर के सायरा बानो द्वारा दायर मामले में निर्णय देते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने वर्षों से चली आ रही लगातार तीन तलाक कहने की प्रथा को असंवैधानिक करार दिया है।

सर्वोच्च न्यायालय द्वारा तीन तलाक और निकाह हलाला के मामले में दिया गया यह निर्णय निश्चित रुप से समूचे भारतीय मुस्लिम समुदाय में महिला समानता और सशक्तीकरण के मार्ग को क्रांतिकारी रुप से प्रशस्त करेगा। इतना ही नहीं यह एक व्यापक प्रभाव वाले धर्म को पुरातनपंथी सोच से आगे बढ़कर प्रगतिशील स्वरुप प्राप्त करने में भी मददगार साबित होगा।

यहां यह उल्लेख करना समीचीन होगा कि शिक्षित हो या अशिक्षित, सभी प्रकार के भारतीय समाज में धर्म का अपना विशेष प्रभाव है जिसे किसी भी तरह नकारा नहीं जा सकता। यह भी सच है कि देश के वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में धर्म की कोई औपचारिक शिक्षा नहीं प्रदान की जाती है। परिणाम स्पष्ट है। जीवन को प्रभावित करने वाले सबसे महत्वपूर्ण तत्व 'धर्म' की शिक्षा के लिए लोगों को तथाकथित बाबाओं, मौलवियों, पादरियों एवं अन्य स्वयंप्रभु धर्म गुरुओं के शरण में जाना पड़ता है जो वास्तव में आस्था और भक्ति के नाम पर जन–भावनाओं से खेल रहे होते हैं। हाल के वर्षो में उभरे आशाराम, नृत्यानन्द, रामपाल और राम–रहीम जैसे उदाहरण तो आस्था, विश्वास, भक्ति और धर्म के नाम पर लोगों के छले जाने की गाथा ही बयान करते हैं। जैसा कि राम–रहीम मामले में सजा सुनाते हुए सीबीआई के स्पेशल जज जगदीप सिंह ने कहा है कि इन तथाकथित बाबाओं के घृर्णित कार्यों ने धर्म और आध्यात्म के प्राचीन भारतीय विरासत को बेआबरु करने का शर्मनाक काम किया है।

एक ओर जहां विद्वानों, प्रबुद्ध समाजसेवी संस्थानों एवं सरकार द्वारा समाज में वैज्ञानिक चेतना विकसित करने की कोशिश की जा रही है वहीं चन्द स्वार्थी और स्वघोषित भगवान के दूतों या पाखंडियों द्वारा आस्था, विश्वास, भक्ति और धर्म की भ्रमित धारणा फैलाए जाने के कारण अन्धविश्वास एवं दकियानुसी विचारों को प्रश्रय मिल रहा है। यह निश्चित ही प्रगतिशील समाज के विकास में बाधक साबित होगी।

ऐसे में बेहतर होगा कि शिक्षा व्यवस्था के तहत देश के धर्मनिरपेक्ष स्वरुप को ध्यान में रखते हुए विविध धर्मों के उच्च एवं सर्वसमावेशी अवधारणाओं की शिक्षा प्रदान की जाए ताकि भावी पीढ़ी के लोग सहज ही धर्म और आध्यात्म की जानकारी प्राप्त कर आस्था, विश्वास और भक्ति के स्वघोषित ठेकेदारों की चपेट में आने से स्वयं को बचा सकें तथा निरर्थक रीति–रिवाजों एवं रस्मों से अपना पीछा छुड़ाकर प्रगति के मार्ग पर आसानी से आगे बढ़ सकें।

— बी. संजय

कला स्नातक के हिन्दी साहित्य विषय पर विकसित स्व–अनुदेशन सामग्री की परम्परागत शिक्षण विधि से प्रभाविता का विद्यार्थियों की उपलब्धि एवं प्रतिक्रियाओं के संदर्भ में अध्ययन

–एच. आर. पाल
–संतोष एस्के

प्रस्तुत शोध देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर के कला स्नातक के विद्यार्थियों हेतु हिन्दी साहित्य के विषय 'प्रयोजनमूलक हिन्दी' पर विकसित प्रमाप की प्रभाविता का विद्यार्थियों की हिन्दी साहित्य में उपलब्धि एवं प्रतिक्रियाओं के संदर्भ में किया गया है जो शिक्षा तकनीकी के क्षेत्र से संबंधित है। स्पष्ट तौर पर कहा जाए तो यह शोध हिन्दी साहित्य के 'प्रयोजनमूलक हिन्दी' विषय पर स्व–अनुदेशन सामग्री के विकास तथा उसकी प्रभाविता से संबंधित है।

वर्तमान में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में तीव्रगति से विकास हो रहा है। उच्चशिक्षा के क्षेत्र में विभिन्न नवीन विषय जुड़ रहे हैं और साथ ही साथ अध्ययन–अध्यापन की भी अनेक नवीन विधियों का विकास हो रहा है जैसे– पारंगतता अधिगम (Mastery Learning), परियोजना (Project) अभिक्रमित अनुदेशन (Programmed Instruction) कम्प्यूटर सहायक अनुदेशन सामग्री (Computer Assisted Instruction Materials) एवं प्रमाप (Module) आदि। आजकल स्व–अध्ययन के लिए जो प्रणालियां प्रयोग में लायी जा रही हैं, उनमें अभिक्रमित अनुदेशन, कम्प्यूटर सहायक अनुदेशन एवं प्रमाप मुख्य हैं। विश्वविद्यालयीन विद्यार्थियों में अध्यापक के बिना भी स्वयं सीखने की क्षमता होती है। वे अध्यापक द्वारा की गयी व्यूह रचना में स्वयं अपनी समस्याओं का समाधान निकाल सकते हैं। स्व–अनुदेशन सामग्री, विद्यार्थी के स्वयं के द्वारा सीखने के साधन के रूप में प्रयोग में लायी जाती है। स्व–अनुदेशन सामग्री किसी विषयवस्तु की सरलतम और विस्तृत व्यूह रचना होती है। ये सभी सामग्रियां व्यक्तिपरक अनुदेशन प्रदान करती हैं। व्यक्तिपरक अनुदेशन का अर्थ निम्नलिखित प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है–

1.1. व्यक्तिपरक अनुदेशन

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया का संचालन विद्यार्थियों में व्याप्त वैयक्तिक भिन्नताओं को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए, ताकि प्रत्येक विद्यार्थी अपनी विशेषताओं के आधार पर अनुदेशन प्राप्त कर सकें। इस प्रकार प्रदान किए गए अनुदेशन को व्यक्तिपरक अनुदेशन कहा जाता है। हसन एवं पोस्टलेथवेट (1985) के अनुसार– ''व्यक्तिपरक अनुदेशन शिक्षण का वह

रूप है जिसमें अनुदेशन एक व्यक्ति के आधार पर प्रदान किया जाता है, न की सामूहिक आधार पर, ताकि अधिगमकर्ता की रुचि, योग्यता, क्षमता व आवश्यकता के अनुरूप शिक्षण प्रदान किया जा सके।''

विल्सन (1987) ने व्यक्तिपरक अनुदेशन को परिभाषित करते हुए कहा है कि – ''व्यक्तिपरक अनुदेशन शिक्षण को प्रत्येक प्रशिक्षणार्थी की व्यक्तिगत आवश्यकताओं के योग्य बनाता है और विभिन्न प्रशिक्षणार्थियों के मध्य अंतर को समायोजित करता है। 'प्रमाप' व्यक्तिपरक अनुदेशन प्रदान करने वाली अनुदेशन सामग्री है।''

1.2. प्रमाप

प्रमाप एक स्व–अनुदेशन सामग्री है जो स्वतः परिपूर्ण व स्वतंत्र इकाई होती है, जिसमें निश्चित विषयवस्तु को क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत किया जाता है। प्रत्येक विद्यार्थी अपनी गति, रुचि, योग्यता के अनुरूप अध्ययन करते हुए प्रमाप के पूर्व निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त करने की ओर अग्रसर होता है। इन उद्देश्यों को प्राप्त करने हेतु प्रमाप में उचित व स्पष्ट अनुदेशन, विविध गतिविधियों तथा अधिगम अनुभवों की व्यवस्था रहती है। प्रमाप में पूर्व परीक्षण तथा विषयवस्तु के प्रस्तुतीकरण के पश्चात् स्वमूल्यांकन हेतु पश्च परीक्षण की व्यवस्था होती है। अतः प्रत्येक प्रमाप में अनुदेशन के तीन आधारभूत समन्वित घटकों यथा उद्देश्य, अधिगम गतिविधियों एवं मूल्यांकन को सम्मिलित किया जाता है (शर्मा,1985)। गोल्डस्मिथ (1973) के अनुसार – प्रमाप से तात्पर्य स्वपरिपूर्ण, स्वतंत्र तथा नियोजित अधिगम शृंखलाओं से है जो कि छात्र के लिए पूर्व निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक होती है। क्रेगर एवं मूरे (1971) ने प्रमाप को परिभाषित करते हुए कहा है कि प्रमाप एक स्वतंत्र अनुदेशन इकाई होती है, जिसमें प्रारंभिक केन्द्रण कुछ सुपरिभाषित उद्देश्यों पर रहता है। प्रमाप के तत्व, इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए आवश्यक सामग्रियां एवं अनुदेशन होते हैं। प्रतिरूपक की सीमाएं केवल कथनित उद्देश्यों के रूप में परिभाषित करने योग्य होती हैं। विभिन्न विद्वानों ने अपने शोध कार्यों में प्रमाप के विभिन्न घटकों का वर्णन किया है।

क्रेगर एवं मूरे (1971) ने प्रमाप के निम्न घटक बताए हैं – 1. प्रयोजन कथन (Statement of Purpose), 2. वांछित पूर्व आवश्यक कौशल (Desirable Prerequisite Skills), 3. अनुदेशनात्मक उद्देश्य (Instructional Objective), 4. नैदानिक पूर्व परीक्षण (Diagnostic Pre Test), 5. प्रमाप के क्रियान्वयक (Implementers for the Module), 6. प्रमाप कार्यक्रम (The Modular Program), 7. संबंधित अनुभव (Related Experience), 8. मूल्यांकनात्मक पश्च परीक्षण (Evaluative Post Test) और 9. प्रमाप का निर्धारण (Assessment of Module)।

पाल एवं शर्मा (2009) ने अनुदेशन सामग्री की निम्न रूपरेखा बतायी है – 1. परिचय

(Introduction) 2. उद्देश्य (Objective), 3. विषयवस्तु का प्रस्तुतीकरण (Presentation of content) 4. अधिगम अभ्यास (Learning practices), 5. शब्द सूची (Glossary), 6. आगे अध्ययन के लिये पुस्तकें (Books for further study)।

1.3. उच्च शिक्षा के विद्यार्थियों की सामाजिक–मनोवैज्ञानिक विशेषताएं

पाल (2000) ने अपनी पुस्तक 'उच्च शिक्षा में अध्ययन एवं अध्यापन की विधियां' में कहा है – ''विश्वविद्यालय समाज व्यवस्था का एक अंग है। विद्यालयीन शिक्षा पूर्ण करने के पश्चात् विद्यार्थी उच्च शिक्षा हेतु विश्वविद्यालय/महाविद्यालय में प्रवेश लेते हैं। महाविद्यालय का वातावरण विद्यालय से भिन्न होता है। इसलिए महाविद्यालयीन अध्यापकों के लिए महाविद्यालय के विद्यार्थियों की सामाजिक मनोवैज्ञानिक विशेषताओं को जानना आवश्यक है। विद्यालय में जहां विद्यार्थी अपने अध्यापक के सतत् पर्यवेक्षण में कार्य करता है, वहीं महाविद्यालय में स्थिति बिल्कुल अलग होती है। यहां छात्र अपने अनुसार अध्ययन करने हेतु पूर्णतः स्वतंत्र होता है। इसके साथ ही महाविद्यालयों में विद्यालयों के समान नियमों का पालन करने के लिए भी वे बाध्य नहीं होते हैं। यद्यपि विद्यालयीन शिक्षा के दौरान वे माता–पिता पर आश्रित होते हैं, किन्तु महाविद्यालयीन विद्यार्थी अपेक्षाकृत स्वतंत्र होते हैं। वे अपने जीवन का लक्ष्य स्वयं निर्धारित करते हैं। किस पाठ्क्रम में प्रवेश लेना है ? किस व्यवसाय में भविष्य बनाना है ? इत्यादि सभी निर्णय वे स्वयं ही लेते हैं। इसी के आधार पर वे अपने पाठ्क्रम का चयन करते हैं। जबकि उच्च आत्मसम्मान वाले युवाओं की रुचि राजनीति में अधिक होती है।'' गाल्लटिन (1980) एवं अडेल्सन (1978) ने अपने शोध में यह पाया कि युवाओं की राजनैतिक विचारधारा उनकी राष्ट्रीयता से प्रभावित होती है। हमारे देश में भी यह देखा गया है कि, विश्वविद्यालय अथवा महाविद्यालयों में छात्रसंघ के चुनाव में छात्र किसी न किसी राजनैतिक दल के समर्थक होते हैं, एवं कालांतर में विधायक अथवा सांसद आदि भी बनते हैं। महाविद्यालयीन विद्यार्थियों की अभिक्षमताएं अलग–अलग होती हैं जिनके आधार पर वे अपने पाठ्यक्रम एवं व्यवसायों का चुनाव करते हैं।

पाल (2000) के अनुसार विश्वविद्यालयीन विद्यार्थियों की अग्र विशेषताएं होती हैं – 1. महाविद्यालयीन विद्यार्थी अध्ययन हेतु स्वतंत्र होते हैं। 2. अपने भविष्य के प्रति चिंतित होते हैं। 3. अपने जीवन से संबधित निर्णय लेने में भी स्वतंत्र होते हैं। 4. स्व–अनुशासित होते हैं। 5. बौद्धिक स्तर के आधार पर प्रायः 70 से 80 प्रतिशत विद्यार्थी औसत बुद्धि के होते हैं और 6. महाविद्यालयीन विद्यार्थी अन्तर्मुखी, बहिर्मुखी एवं उभयमुखी सभी प्रकार के व्यक्तित्वों वाले होते हैं।

1.4. हिन्दी भाषा एवं साहित्य

संसार में लगभग अठ्ठाइस सौ (2800) भाषाएं हैं, जिनमें से तेरह ऐसी भाषाएं हैं जिनको बोलने वालों की संख्या तुलनात्मक रुप से बहुत अधिक है। संसार की सभी भाषाओं में से

बोलने वालों की संख्या के आधार पर हिन्दी भाषा को तृतीय स्थान प्राप्त है (प्रसाद, 2006)। इस समय विश्व के लगभग दो सौ (200) विश्वविद्यालयों में हिन्दी विषय के अध्ययन–अध्यापन की व्यवस्था है।

वर्तमान भारत में हिन्दी को राजभाषा का दर्जा प्राप्त है। इसके साथ–साथ भारत की जमीन से जुड़ी होने के कारण इसकी उपादेयता और भी बढ़ जाती है। इसी कारण से भारत के सभी विश्वविद्यालयों में हिन्दी भाषा को अनिवार्य आधारभूत पाठ्यक्रम के रूप में पढ़ाया जाता है तथा उच्च शैक्षिक स्तर (स्नातक, स्नातकोत्तर तथा एम.फिल. व पी–एच. डी.) पर हिन्दी साहित्य के रूप में अध्ययन – अध्यापन कराया जाता है। भाषा के द्वारा मानव जाति अपने भावों की अभिव्यक्ति कर न केवल समाज से बंधी है अपितु यह राष्ट्रों की समस्याओं की गुत्थी भी सुलझा सकती है। भाषा का विचारों से अटूट संबंध होता है। भाषा सभ्यता का प्रतिबिम्ब है। भाषा और समाज, देश अथवा राष्ट्र की सभ्यता उसके साहित्य से आंकी जाती है। ''मानव शरीर में जो स्थान नाड़ी–संस्थान का है मानव समाज में वही स्थान भाषा का होता है।'' भाषा विहीन व्यक्ति केवल बुद्धिविहीन ही नहीं होता बल्कि भावहीन भी हो जाता है। भाषा अध्यापन द्वारा शिक्षक भावाभिव्यक्ति, सम्प्रेषण एवं अन्तर्क्रिया प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत कर सकता है और अपने समाज एवं राष्ट्र को एक सूत्र में पिरो सकता है।

हिन्दी साहित्य विषय में आरम्भ से लेकर वर्तमान तक अनेकों परिवर्तन हुए हैं। विभिन्न नवीन संकल्पनाएं भी शामिल की गयी। 'प्रयोजनमूलक हिन्दी' हिन्दी साहित्य विषय की एक नवीन संकल्पना है। यह हिन्दी भाषा की अत्याधुनिक एवं अपेक्षाकृत बहुआयामी एवं बहुउपयोगी शाखा है।

1.5. प्रयोजनमूलक हिन्दी

प्रयोजनमूलक हिन्दी भाषा विज्ञान की महत्वपूर्ण शाखा 'अनुप्रयुक्त भाषा विज्ञान' के अन्तर्गत एक अत्याधुनिक उप–भाषा के रूप में विकसित हुई है। 'प्रयोजनमूलक' एक पारिभाषिक शब्द है जो भाषा की अनुप्रयुक्तता और प्रायोगिकता के निश्चित अर्थ में प्रयुक्त की जाती है।

प्रयोजनमूलक हिन्दी के संदर्भ में 'प्रयोजन' विशेषण में 'मूलक' प्रत्यय लगने से 'प्रयोजनमूलक' पद बना है। प्रयोजन से तात्पर्य है उद्देश्य अथवा प्रयोजन (Purpose of Use)। प्रयोजन का सम्बन्ध भाषा में उसकी प्रयोजनीयता (Applicability) से जुड़ा हुआ है तथा 'मूलक' प्रत्यय का तात्पर्य – आधारित (Based on or Depending on) होने से है। अतः प्रयोजनमूलक भाषा का तात्पर्य किसी विशिष्ट उद्देश्य के अनुसार प्रयुक्त भाषा से है। इसी संदर्भ में कहा जाए तो 'प्रयोजनमूलक हिन्दी' का अर्थ हुआ : ऐसी विशिष्ट हिन्दी जिसका प्रयोग किसी विशिष्ट प्रयोजन (उद्देश्य) के लिए किया जाता है।

1. पूर्व शोध

प्रस्तुत शोध में संबंधित साहित्य से प्राप्त पूर्व शोधों को अग्र भागों में विभाजित किया गया है– 1. प्रमाप की एकल प्रभाविता व प्रमाप की परम्परागत व अन्य विधियों से प्रभाविता तथा 2. भाषा व साहित्य के विविध पक्षों से संबंधित शोध।

इन दोनों का कालानुक्रम अनुसार वर्णन यहां प्रस्तुत किया जा रहा है–

2.1. प्रमाप की परम्परागत व अन्य विधियों से प्रभाविता से संबंधित पूर्व शोध अग्र लिखित हैं–

हुरमाड़े (2012) ने कक्षा 10 वीं के विद्यार्थियों के लिए हिन्दी व्याकरण पर विकसित स्व–अधिगम सामग्री कि प्रभाविता का हिन्दी व्यारकण में उपलब्धि एवं स्व–अधिगम सामग्री के प्रति प्रतिक्रियाओं के आधार पर अध्ययन किया। प्रस्तुत शोध के निष्कर्ष थे – 1. स्व–अधिगम सामग्री समूह के विद्यार्थियों कि हिन्दी व्याकरण कि उपलब्धि में सार्थक वृद्धि पायी गयी । आर्थात् स्व–अधिगम सामग्री समूह की उपलब्धि परम्परागत विधि समूह की उपलब्धि की तुलना में सार्थक रूप से उच्च पायी गयी। 2. विद्यार्थियों की हिन्दी व्याकरण उपलब्धि पर बुद्धि का सार्थक प्रभाव पाया गया परन्तु उपचार व बुद्धि के अन्तर्क्रिया का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पाया गया, विद्यार्थियों की उपलब्धि, भाषिक सृजनात्मकता व उपचार एवं भाषिक सृजनात्मकता के अन्तर्क्रिया का सार्थक प्रभाव पाया गया, विद्यार्थियों कि उपलब्धि पर अध्ययन की आदत एवं उपलब्धि अभिप्रेरणा का भी सार्थक प्रभाव पाया गया तथा सामाजिक आर्थिक स्तर एवं लिंग व उनकी अन्तर्क्रिया का भी विद्यार्थियों कि उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव पाया गया। 3. स्व–अधिगम सामग्री समूह ने हिन्दी व्याकरण पर विकसित स्व–अधिगम सामग्री के विभिन्न पहलुओं एवं सम्पूर्ण स्व–अधिगम सामग्री के प्रति अत्यधिक अनुकूल प्रतिक्रियाएँ व्यक्त कीं।

शर्मा (2009) ने वाणिज्य के विद्यार्थियों के लिए व्यावसायिक–सम्प्रेषण पर अनुदेशन – सामग्री की प्रभाविता का उपलब्धि एवं अनुदेशन–सामग्री के प्रति प्रतिक्रियाओं के संदर्भ में अध्ययन किया। अध्ययन के मुख्य निष्कर्ष थे – 1. विद्यार्थियों की व्यावसायिक–सम्प्रेषण में उपलब्धि प्रदान करने में अनुदेशन–सामग्री, व्याख्यान विधि से सार्थक रूप से श्रेष्ठ पायी गयी, जबकि व्यावसायिक–सम्प्रेषण में पूर्व–उपलब्धि को सहप्रसरक माना गया था, 2. उच्च, मध्यम व निम्न बुद्धि वाले विद्यार्थियों के व्यावसायिक–सम्प्रेषण में उपलब्धि के समायोजित माध्य फलांकों में सार्थक अन्तर पाया गया, जबकि व्यावसायिक–सम्प्रेषण में पूर्व उपलब्धि, व्यक्तित्व व सामाजिक–आर्थिक स्थिति को सहप्रसरक माना गया, 3. व्यावसायिक–सम्प्रेषण में उपलब्धि, उपचार तथा बुद्धि की अन्तर्क्रिया से स्वतंत्र पायी गयी, 4. व्यावसायिक–सम्प्रेषण में उपलब्धि, सामाजिक–आर्थिक स्थिति से स्वतंत्र पायी गयी जबकि व्यावसायिक–सम्प्रेषण में पूर्व उपलब्धि, बुद्धि तथा व्यक्तित्व को सहप्रसरक माना गया था, तथा 5. अनुदेशन–सामग्री

समूह ने व्यावसायिक–सम्प्रेषण अनुदेशन–सामग्री के विभिन्न पहलुओं एवं सम्पूर्ण अनुदेशन सामग्री के प्रति अत्यधिक अनुकूल प्रतिक्रियाएं व्यक्त की। अतः व्यावसायिक–सम्प्रेषण पर विकसित सामग्री प्रभावी पायी गई।

पाठक (2008) ने हिन्दी–शिक्षण विषय पर प्रमाप का विकास तथा परम्परागत् विधि से उसकी तुलना बी.एड. छात्राध्यापकों की हिन्दी–शिक्षण में उपलब्धि एवं आत्म–संकल्पना के आधार पर अध्ययन किया। अध्ययन के मुख्य निष्कर्ष थे– 1. हिन्दी–शिक्षण विषय में उपलब्धि के पूर्व परीक्षण एवं बुद्धि को सहचर मानते हुए प्रायोगिक समूह के बी.एड. छात्राध्यापकों ने नियंत्रित समूह के छात्राध्यापकों की तुलना में हिन्दी शिक्षण विषय में सार्थक रूप से उच्च उपलब्धि दर्शायी है, 2. बी.एड. छात्राध्यापकों की हिन्दी शिक्षण में उपलब्धि पर उपचार एवं लिंग की अन्तर्क्रिया का कोई सार्थक प्रभाव नहीं है, जबकि पूर्व हिन्दी–शिक्षण की उपलब्धि को सहचर माना गया है, तथा 3. बी.एड. छात्राध्यापकों की हिन्दी–शिक्षण में उपलब्धि पर बुद्धि व बुद्धि तथा उपचार की अंतर्क्रिया का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ा।

देवेन्द्रकुमार (2005) ने अंग्रेजी भाषा अधिगम हेतु खेल, कार्यपत्रक व स्व–अनुदेशन सामग्री की प्रभाविता का अध्ययन किया। शोध के निष्कर्ष निम्न थे– 1. सभी तीनों उपागमों को अंग्रेजी विषय में उपलब्धि के संदर्भ मे प्रभावी पाया गया, परंतु खेल उपागम को स्व–अनुदेशन सामग्री से बेहतर पाया गया, तथा 2. खेल उपागम के प्रति सर्वाधिक सकारात्मक प्रतिक्रियाएं प्राप्त हुई तथा स्व–अनुदेशन सामग्री व कार्य पत्रक उपागम के प्रति सामान्य प्रतिक्रियाएं प्राप्त हुई।

पंडित (2003) ने बहुस्तरीय कक्षा स्तर पर भाषा योग्यता के संवर्धन हेतु अधिगम विधि व अनुदेशन सामग्री का विकास किया। शोधकर्ता ने पाया कि अनुदेशन सामग्री से उपचारित 82 प्रतिशत विद्यार्थियों ने पठन, लेखन व अवबोध में 80 प्रतिशत से अधिक अंक प्राप्त किए।

आहुजा (2002) ने पर्यावरण शिक्षा पर प्रमाप का विकास कर उसकी प्रभाविता का अध्ययन किया। शोध के उद्देश्य निम्न थे– 1. प्रथम वर्ष के महाविद्यालयीन विद्यार्थियों हेतु पर्यावरण शिक्षा पर प्रमाप का विकास करना, तथा 2. विद्यार्थियों की उपलब्धि के संदर्भ में पर्यावरण शिक्षा पर निर्मित प्रमाप की परम्परागत शिक्षण विधि से सापेक्ष प्रभाविता का अध्ययन करना। शोधकर्ता ने पर्यावरण शिक्षा संबंधी संकल्पनाओं के आधार पर प्रमाप को परम्परागत शिक्षण से प्रभावी पाया।

कोहली (1999) ने भूगोल विषय में पारंगतता व पारंगतता विहीन शिक्षण प्रविधियों, बुद्धि तथा अध्ययन आदत के आधार पर भूगोल विषय में उपलब्धि पर स्व–अधिगम प्रमाप की प्रभाविता का अध्ययन किया। शोध के निष्कर्ष निम्न थे– 1. भूगोल संकल्पनाओं के शिक्षण में पारंगतता प्रविधियों को पारंगतता विहीन प्रविधियों से ज्यादा प्रभावी पाया गया, 2. उच्च बुद्धि वाले विद्यार्थियों की प्रमाप द्वारा उपलब्धि निम्न बुद्धि वाले विद्यार्थियों से ज्यादा पायी गयी, 3. उच्च व निम्न दोनों अध्ययन आदत वाले विद्यार्थियों का निष्पादन एक समान पाया गया, 4. प्रमाप द्वारा उपलब्धि पर बुद्धि ने पारंगतता प्रविधि द्वारा प्रभावित किया, पारंगतता विहीन प्रविधि द्वारा नही, तथा 5. पारंगतता अधिगम उपागम में उच्च व निम्न बुद्धि वाले दोनों समूहों ने सार्थक रूप से अधिक उपलब्धि प्राप्त की।

2.2. भाषा एवं साहित्य के विविध पक्षों से सम्बन्धित शोध

पंडित (2003) ने बहुस्तरीय कक्षा में भाषायी योग्यता को बढ़ाने हेतु अनुदेशन सामग्री एवं अधिगम विधियों का विकास किया। अध्ययन के मुख्य उद्देश्य थे– 1. बहुस्तरीय कक्षा हेतु अनुदेशन सामग्री तैयार करना। 2. अनुदेशन सामग्री की प्रभाविता का निर्णय लेना। अध्ययन का मुख्य निष्कर्ष था– 1. अनुदेशन सामग्री से अध्ययन के पश्चात् 82 प्रतिशत विद्यार्थियों ने पठन, लेखन व ज्ञान में 80 प्रतिशत से ज्यादा फलांक प्राप्त किए।

पन्नालाल (2001) ने भोपाल खण्ड (Division) के उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की उपलब्धि, तार्किक योग्यता एवं सामाजिक–आर्थिक स्थिति के संदर्भ में ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों के हिन्दी पठन योग्यता के तुलनात्मक अध्ययन पर शोध किया। अध्ययन के परिणाम थे– 1. शहरी विद्यार्थी पठन योग्यता, तार्किक योग्यता, सामाजिक–आर्थिक स्थिति एवं हिन्दी में उपलब्धि में ग्रामीण विद्यार्थियों से श्रेष्ठ पाये गये। 2. पठन योग्यता, तार्किक योग्यता एवं सामाजिक–आर्थिक स्थिति के संबंध में लड़कों एवं लड़कियों में कोई अन्तर नहीं पाया गया। 3. लड़कों की तुलना में लड़कियों की उपलब्धि उच्च पायी गयी। 4. पठन योग्यता, तार्किक योग्यता, सामाजिक–आर्थिक स्थिति एवं उपलब्धि के संदर्भ में ग्रामीण लड़कियों की तुलना में शहरी लड़कियां बेहतर पायी गयीं। 5. पठन योग्यता एवं तार्किक योग्यता के संदर्भ में ग्रामीण लड़कों की तुलना में शहरी लड़के बेहतर पाये गये, जबकि सामाजिक–आर्थिक स्थिति एवं उपलब्धि में वे समान थे। 6. सभी विद्यार्थियों की पृथकतः उपलब्धि, सामाजिक–आर्थिक स्थिति, तार्किक योग्यता एवं पठन योग्यता के मध्य सार्थक सह संबंध नहीं था। 7. शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियों की उपलब्धि, सामाजिक–आर्थिक स्थिति, पठन योग्यता एवं तार्किक योग्यता के मध्य सार्थक सह संबंध पाया गया। 8. यह पाया गया कि तार्किक योग्यता, सामाजिक–आर्थिक स्थिति एवं उपलब्धि पठन योग्यता की ओर सार्थक रूप से योगदान देते थे। 9. उपलब्धि, सामाजिक–आर्थिक स्थिति एवं तार्किक योग्यता का पृथकतः सार्थक सह संबंध था।

दानिखेल (1998) ने विद्यालयीन विद्यार्थियों के पठन कौशलों में सुधार हेतु अनुदेशनात्मक सामग्री का विकास किया। अध्ययन के मुख्य निष्कर्ष थे– 1. पठन कौशलों के विकास में सहायक पठन सम्बन्धी अनुदेशन सामग्री, पठन सम्बन्धी ज्ञान, पठन सम्बन्धी शब्द–भण्डार, पठन गति व पठन सम्बन्धी अनुदेशन सामग्री के प्रति प्रतिक्रियाओं के आधार पर सार्थक रूप से प्रभावी पायी गयी। 2. पठन कौशलों के विकास हेतु निर्मित पठन सम्बन्धी अनुदेशन सामग्री परम्परागत उपागम की तुलना में पठन संबंधी ज्ञान के विकास के लिए सार्थक रूप से श्रेष्ठ पायी गयी। 3. पठन कौशलों के विकास हेतु निर्मित पठन सम्बन्धी अनुदेशन सामग्री, विद्यार्थियों के पठन सम्बन्धी शब्द भण्डार की वृद्धि में परम्परागत् उपागम की तुलना में सार्थक रूप से श्रेष्ठ पायी गयी। 4. विद्यार्थियों के पठन सम्बन्धी ज्ञान, शैक्षणिक उपलब्धि अभिप्रेरण व उपचार की अन्तर्क्रिया के प्रभाव से मुक्त पाया गया। 5. विद्यार्थियों से प्राप्त प्रतिक्रियाओं में पाया गया कि अनुदेशन सामग्री कौशलों के विकास में सहायक थी ।

उमादेवी (1997) ने पठन निर्योग्य बच्चों के मध्य पठन बोध कौशलों को सुधारने पर एक उपचारात्मक कार्यक्रम की प्रभाविता पर शोध कार्य किया। शोध के निष्कर्ष थे – 1. उपचारात्मक कार्यक्रम के प्रयोज्य पठन निर्योग्य बच्चों द्वारा कक्षा 1 से 4 के शब्द पहचान परीक्षणों पर प्राप्त पूर्व परीक्षण फलांक एवं पश्चपरीक्षण फलांकों के मध्य एक सार्थक अन्तर था। 2. उपचारात्मक कार्यक्रम के प्रयोज्य पठन निर्योग्य बच्चों द्वारा कक्षा 1 से 4 के पठन बोध परीक्षणों पर प्राप्त पूर्व परीक्षण फलांक एवं पश्चपरीक्षण फलांकों के मध्य एक सार्थक अन्तर था।

2. औचित्य

पूर्व शोधों के अध्ययन से यह ज्ञात हुआ है कि स्व–अनुदेशन सामग्री के विविध रूपों से संबंधित, विभिन्न शोध हुए हैं जिनमें प्रमाप की परम्परागत व अन्य विधियों से प्रभाविता से संबंधित पूर्व शोध – हुरमाड़े (2012), शर्मा (2009), पाठक (2008), देवेन्द्रकुमार (2005), पंडित (2003), आहुजा (2002) एवं कोहली (1999) ने किया है। भाषा एवं साहित्य के विविध पक्षों से सम्बन्धित शोध – पंडित (2003), पन्नालाल (2001), दानिखेल (1998), उमादेवी (1997) आदि ने किया है। पूर्व शोधों के अध्ययन से स्पष्ट है कि स्व–अनुदेशन सामग्री के विविध रूपों से सम्बन्धित विभिन्न शोध हुए हैं, प्रमाप की परम्परागत व अन्य विधियों से प्रभाविता से सम्बन्धित तथा भाषा एवं साहित्य के विविध पक्षों से सम्बन्धित भी शोधकार्य हुए हैं परन्तु स्नातक स्तर के हिन्दी साहित्य विषय में प्रमाप का विकास व उसकी प्रभाविता से सम्बन्धित कोई शोध कार्य नहीं किया गया है। इससे हिन्दी साहित्य विषय पर प्रमाप के विकास व उसकी विभिन्न चरों के संदर्भ में प्रभाविता के अध्ययन की आवश्यकता प्रतिपादित होती है। प्रस्तुत शोध कला स्नातक के विषय हिन्दी साहित्य पर विकसित स्व–अनुदेशन सामग्री की परम्परागत शिक्षण विधि से प्रभाविता का विद्यार्थियों की हिन्दी साहित्य में उपलब्धि एवं

प्रतिक्रियाओं के संदर्भ में कोई भी अध्ययन नहीं किया गया है इससे प्रस्तुत शोध की आवश्यकता प्रतिपादित होती है।

3. समस्या कथन

प्रस्तुत शोध का समस्या कथन था –

"कला स्नातक के विषय हिन्दी साहित्य पर विकसित स्व–अनुदेशन सामग्री की परम्परागत शिक्षण विधि से प्रभाविता का विद्यार्थियों की उपलब्धि एवं प्रतिक्रियाओं के संदर्भ में अध्ययन"

4. उद्देश्य

प्रस्तुत शोध के अग्र उद्देश्य थे –

(I) स्व–अनुदेशन सामग्री एवं परम्परागत शिक्षण विधि समूह के विद्यार्थियों के हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि के समायोजित माध्य फलांको की तुलना करना जबकि हिन्दी साहित्य विषय में पूर्व उपलब्धि को सहप्रसरक के रूप में लिया गया हो।

(II) विद्यार्थियों की हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि पर शिक्षण विधि, बुद्धि एवं उनकी अन्तर्क्रिया के प्रभाव का अध्ययन करना जबकि हिन्दी साहित्य विषय में पूर्व उपलब्धि को सहप्रसरक के रूप में लिया गया हो।

5. परिकल्पनाएं

प्रस्तुत शोध की अग्र परिकल्पनाएं थी –

(I) स्व–अनुदेशन सामग्री एवं परम्परागत शिक्षण विधि समूह के विद्यार्थियों के हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि के समायोजित माध्य फलांको में कोई सार्थक अन्तर नहीं होगा जबकि हिन्दी साहित्य विषय में पूर्व उपलब्धि को सहप्रसरक के रूप में लिया गया हो।

(II) विद्यार्थियों की हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि पर शिक्षण विधि, बुद्धि एवं उनकी अन्तर्क्रिया का कोई सार्थक प्रभाव नहीं होगा जबकि हिन्दी साहित्य विषय में पूर्व उपलब्धि को सहप्रसरक के रूप में लिया गया हो।

6. न्यादर्श

प्रस्तुत शोध की समष्टि इन्दौर सम्भाग के देवी अहिल्या विश्वविद्यालय से संबंधित महाविद्यालय के स्नातक स्तर के कला संकाय के विद्यार्थी थे। इस समष्टि में से देवी अहिल्या विश्वविद्यालय से संबंधित शासकीय महाविद्यालय, धामनोद (जिला धार), शासकीय महाविद्यालय, धरमपुरी (जिला धार), शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेंधवा (जिला बडवानी), शासकीय महाविद्यालय, निवाली (जिला बडवानी) के स्नातक स्तर के कला संकाय के हिन्दी साहित्य विषय वाले 200 विद्यार्थियों का सोद्देश्य न्यादर्शन विधि द्वारा चयन किया गया। प्रस्तुत शोध के न्यादर्श में चयनित विद्यार्थी सभी सामाजिक–आर्थिक स्तर व शहरी एवं ग्रामीण

आवासीय पृष्ठभूमि के थे। इन विद्यार्थियों की उम्र 19 से 22 वर्ष के मध्य थी। चयनित विद्यार्थी केवल कला संकाय के हिन्दी साहित्य विषय वाले थे। चयनित विद्यार्थियों में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग व सामान्य वर्ग के विद्यार्थी सम्मिलित थे।

7. शोध प्राकल्प

प्रस्तुत शोध प्रयोगात्मक प्रकार का था, जिसमें गैर समतुल्य नियन्त्रित समूह प्राकल्प का उपयोग किया गया। प्राकल्प का सांकेतिक रूप इस प्रकार है–

O X O

———————

O O (केम्पबेल एवं स्टेनले, 1963, पृ 47)

जहाँ O = निरीक्षण, X = उपचार व ——— = असमतुल्यता।

प्रस्तुत शोध में दो समूह प्रयोगात्मक व नियन्त्रित थे। प्रयोगात्मक समूह को स्व–अनुदेशन सामग्री द्वारा तथा नियन्त्रित समूह को परम्परागत शिक्षण विधि द्वारा शिक्षण प्रदान किया गया। शोध में उपचार की अवधि 2 माह की थी। शोध में हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि व विकसित स्व–अनुदेशन सामग्री के प्रति प्रतिक्रियाएं आश्रित चर थे।

शोध में शिक्षण विधि एवं बुद्धि स्वतन्त्र चर थे तथा हिन्दी साहित्य विषय में पूर्व उपलब्धि को सह प्रसरक के रूप में लिया गया और इसे सह प्रसरण विश्लेषण (ANCOVA) के द्वारा इसे नियन्त्रित किया गया।

8. उपकरण

8.1. हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि

स्नातक स्तर के विद्यार्थियों की हिन्दी साहित्य में उपलब्धि के आकलन हेतु शोधार्थी द्वारा निर्मित निकष परीक्षण का उपयोग किया गया। प्रस्तुत परीक्षण का निर्माण शोधार्थी द्वारा विकसित स्व–अनुदेशन सामग्री के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए किया गया। इस परीक्षण में 100 वस्तुनिष्ठ प्रश्नों को शामिल किया गया, जो सभी बहुविकल्पीय प्रकार के थे। इन प्रश्नों के सामने दिए गए चार विकल्पों में से किसी एक विकल्प पर सही का निशान लगाकर उत्तर देना था। प्रस्तुत परीक्षण की समयावधि 2 घण्टे की थी और प्रत्येक प्रश्न 01 अंक का था।

8.2. विकसित स्व–अनुदेशन के प्रति प्रतिक्रियाएं

विकसित स्व–अनुदेशन सामग्री के प्रति विद्यार्थियों की प्रतिक्रियाओं के आकलन हेतु शोधार्थी द्वारा प्रतिक्रिया मापनी का निर्माण किया गया। प्रस्तुत प्रतिक्रिया मापनी विकसित स्व–अनुदेशन सामग्री की प्रभाविता के विभिन्न पहलुओं यथा – उद्देश्य, विषय वस्तु, भाषा शैली, उदाहरण, अधिगम अभ्यास आदि की प्रभाविता से संबंधित कथनों के आधार पर किया गया। इस प्रतिक्रिया मापनी में कुल 30 कथन शामिल किये गए थे, जिनमें सकारात्मक व नकारात्मक दोनों प्रकार के कथन थे। इनमें से किसी एक विकल्प पर प्रशिक्षणार्थियों को सही

(ü) का चिन्ह लगाकर प्रतिक्रिया देनी थी। प्रतिक्रिया मापनी हेतु कोई निर्धारित समय नहीं था। प्रतिक्रिया मापनी में सामान्य जानकारी व आवश्यक निर्देशों का प्रावधान भी था।

8.3. बुद्धि (Intelligence)

बुद्धि मापन हेतु जे. सी. रेवेन्स द्वारा निर्मित स्टैन्डर्ड प्रोग्रेसिव मेट्राइसेस परीक्षण का उपयोग किया गया। यह परीक्षण एच. के. लेविस एण्ड कार्पो. लिमिटेड, लन्दन द्वारा 1971 में प्रकाशित हुई है। यह बुद्धि का अशाब्दिक संस्कृति मुक्त परीक्षण है, जो अमूर्त बुद्धि का मापन करता है। इस परीक्षण का उपयोग 6 से 65 वर्ष उम्र के समूह पर किया जा सकता है। परीक्षण में कुल 60 पद है, जो पांच भाग A, B, C, D, E में वर्गीकृत हैं, जैसे– अमूर्त चिन्तन, विभेदकारी चिन्तन, समझने योग्य शक्ति, दूरी संबध आदि। इन पदों का कठिनाई स्तर क्रमशः बढ़ता हैं। इस परीक्षण को हल करने के लिए समय सीमा का कोई बंधन नही है। इसको व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप से प्रशासित किया जा सकता है। प्रत्येक समस्या हेतु 6 विकल्प दिए गए हैं, जिनमें से किसी एक चयनित विकल्प क्रमांक को परीक्षार्थी द्वारा अनुक्रिया पत्रक में भरना होता है। सही उत्तर हेतु एक अंक तथा गलत उत्तर हेतु शुन्य अंक प्रदान किए जाते हैं। कुल प्राप्तांको द्वारा परीक्षार्थी की बौद्धिक क्षमता का ज्ञान होता है, जिसकी विवेचना हस्तपुस्तिका में दिए गए उम्र व प्रतिशतांक मानक के आधार पर की जाती है। इसकी विश्वसनीयता गुणांक परीक्षण–पुनर्परीक्षण विधि से भिन्न उम्र समूह के साथ 0.83 तथा 0.93 है। अर्धविच्छेद विधि से विश्वसनीयता गुणांक का विस्तार 0.60 से 0.90 है। इसका टर्मन मेरिल स्केल के साथ सहसम्बन्ध गुणांक 0.86 पाया गया है।

9. प्रदत्त संकलन

प्रस्तुत शोध अध्ययन के प्रदत्त संकलन हेतु सर्वप्रथम चयनित महाविद्यालयों के प्राचार्यों से अनुमति प्राप्त की गयी। तत्पश्चात् न्यादर्श हेतु चयनित विद्यार्थियों को मौखिक रूप से दिशा निर्देश देकर शोध के उद्देश्यों से अवगत करवाकर आत्मिक सम्बन्ध स्थापित किये गए। इसके पश्चात् चयनित विद्यार्थियों के दोनों समूहों पर शोधक द्वारा निर्मित पूर्व उपलब्धि निकष परीक्षण का प्रशासन किया गया। निकष परीक्षण के प्रशासन के पश्चात् यादृच्छिक रूप से एक समूह/समूहों को स्व–अनुदेशन सामग्री तथा दूसरे समूह/समूहों को परम्परागत शिक्षण विधि द्वारा शिक्षण प्रदान किया गया। इनमें से शासकीय महाविद्यालय, धरमपुरी (जिला धार) एवं शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेंधवा (जिला बडवानी) को प्रयोगात्मक समूह एवं शासकीय महाविद्यालय, धामनोद (जिला धार) एवं शासकीय महाविद्यालय, निवाली (जिला बडवानी) नियंत्रित समूह बनाया गया। शिक्षण के दौरान दोनों समूहों के विद्यार्थियों पर शोध के स्वतन्त्र चर – बुद्धि के मापन हेतु बुद्धि परीक्षण का प्रशासन किया गया। तत्पश्चात् दोनों समूहों के विद्यार्थियों पर शोधार्थी द्वारा निर्मित पश्च उपलब्धि निकष परीक्षण का प्रशासन किया गया। इसके पश्चात् केवल प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों पर स्व–अनुदेशन सामग्री की प्रभाविता के अध्ययन हेतु शोधार्थी द्वारा निर्मित प्रतिक्रिया मापनी का प्रशासन किया गया।

सबसे अन्त में, मानकीकृत जे. सी. रेवेन्स द्वारा निर्मित स्टैन्डर्ड प्रोग्रेसिव मेट्राइसेस बुद्धि परीक्षण की हस्तपुस्तिका में दिये गए निर्देशों के अनुरूप इस परीक्षण पर विद्यार्थियों की अनुक्रियाओं का फलांकन किया गया। निकष परीक्षण व प्रतिक्रिया मापनी पर शोधार्थी द्वारा निर्धारित पर पूर्व मानदण्डों के आधार पर फलांकन किया गया। इस प्रकार शोध के आश्रित व स्वतन्त्र सभी चरों के प्रदत्त एकत्रित कर लिये गए।

10. प्रदत्त विश्लेषण

प्रस्तुत शोध में उद्देश्यों के अनुरूप अग्र सांख्यिकीय विधियों के द्वारा प्रदत्तों का विश्लेषण किया गया–

(I) हिन्दी साहित्य में पूर्व उपलब्धि को सहप्रसरक के रूप में लेते हुए स्व–अनुदेशन सामग्री व परम्परागत विधि समूह के विद्यार्थियों के हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि के समायोजित माध्य फलांकों की तुलना करने हेतु एक मार्गीय सहप्रसरण विश्लेषण (ONE WAY ANCOVA) का उपयोग किया गया।

(II) हिन्दी साहित्य में पूर्व उपलब्धि को सहप्रसरक के रूप में लेते हुए विद्यार्थियों के हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि पर शिक्षण विधि, बुद्धि तथा उनकी अन्तर्क्रिया के प्रभाव के अध्ययन हेतु सहप्रसरक विश्लेषण के 2.2 कारकीय प्रारूप का उपयोग किया गया।

11. परिसीमन / सीमांकन

प्रस्तुत शोध की अग्र परिसीमाएं थी–

(I) प्रस्तुत शोध केवल देवी अहिल्या विश्वविद्याालय के कला स्नातक स्तर के 200 विद्यार्थियों के न्यादर्श पर ही किया गया।

(II) स्व–अनुदेशन सामग्री का निर्माण हिन्दी साहित्य के 'प्रयोजनमूलक हिन्दी' प्रश्न पत्र पर विकसित किया गया।

(III) प्रस्तुत शोधकार्य में हिन्दी साहित्य में उपलब्धि के आकलन हेतु शोधक द्वारा निर्मित परीक्षण का उपयोग किया गया।

(IV) प्रस्तुत शोधकार्य में केवल कला संकाय के विद्यार्थियों पर ही प्रमाप द्वारा शिक्षण की प्रभाविता का अध्ययन किया गया।

(V) प्रस्तुत शोधकार्य में न्यादर्श के चयन हेतु सौद्देश्य न्यादर्श तकनीक का उपयोग किया गया।

12. परिणाम एवं विवेचना

1. स्व–अनुदेशन सामग्री एवं परम्परागत शिक्षण विधि समूह के विद्यार्थियों के हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि के समायोजित माध्य फलांको की तुलना, जबकि

हिन्दी साहित्य विषय में पूर्व उपलब्धि को सहप्रसरक के रूप में लिया गया हो।

प्रस्तुत शोध की प्रथम परिकल्पना थी– ''स्व–अनुदेशन सामग्री एवं परम्परागत शिक्षण विधि समूह के विद्यार्थियों के हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि के समायोजित माध्य फलांको में कोई सार्थक अन्तर नहीं होगा जबकि हिन्दी साहित्य विषय में पूर्व उपलब्धि को सहप्रसरक के रूप में लिया गया हो'' । यहाँ स्वतंत्र परिवर्ती था– 'शिक्षण विधि'। इसके दो स्तर थे– स्व–अनुदेशन सामग्री एवं परम्परागत शिक्षण विधि। मानदण्ड परिवर्ती 'विद्यार्थियों के हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि' थी। 'हिन्दी साहित्य विषय में पूर्व उपलब्धि' को सहप्रसरक के रूप में लिया गया था। अतः इस उद्देश्य से संबंधित प्रदत्तों का विश्लेषण 'एकमार्गीय सहप्रसरण विश्लेषण (One way Analysis of Co-variance) की सहायता से किया गया। विश्लेषण से प्राप्त परिणाम तालिका 5.1 में दिए गए हैं।

तालिका 5.1 : महाविद्यालय स्तर के विद्यार्थियों के हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि के संदर्भ में 'एकमार्गीय सहप्रसरण विश्लेषण' (one way Analysis of Co-variance) का सारांश, जबकि हिन्दी साहित्य विषय में पूर्व उपलब्धि को सहप्रसरक के रूप में लिया गया हो।

विचरण के स्रोत	स्वतंत्रता की कोटि (df)	वर्गों का योग (SS)	वर्गों का माध्य योग (MSS)	एफ मान (F Value)	सार्थकता स्तर (LOS)
शिक्षण विधि	1	18868.01	18868.01	224.37 **	.00
त्रुटि	197	16566.42	84.09		
योग	198				

**- 0.01 सार्थकता स्तर पर सार्थक

तालिका 5.1 से स्पष्ट होता है, कि शिक्षण विधि के लिए समायोजित 'F' का मान 224. 37 है, जिसके लिए सार्थकता स्तर का मान स्वतंत्रता की कोटि (df) =1/197 पर 0.00 है, जो कि सार्थकता के स्तर 0.01 से छोटा है, अतः शिक्षण विधि के लिए समायोजित 'F' का मान सार्थकता के स्तर 0.01 पर सार्थक है। अर्थात् स्व–अनुदेशन सामग्री एवं परम्परागत शिक्षण विधि समूह के विद्यार्थियों के हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि के समायोजित माध्य फलांकों में सार्थक अन्तर है, जबकि हिन्दी साहित्य विषय में पूर्व उपलब्धि को सहप्रसरक के रूप में लिया गया हो। अतः इस परिस्थिति में शून्य परिकल्पना ''स्व–अनुदेशन सामग्री एवं परम्परागत शिक्षण विधि समूह के विद्यार्थियों के हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि के समायोजित माध्य फलांको में कोई सार्थक अन्तर नहीं होगा जबकि हिन्दी साहित्य विषय में पूर्व उपलब्धि को सहप्रसरक के रूप में लिया गया हो'' निरस्त की जाती है। आगे स्पष्ट है कि स्व–अनुदेशन सामग्री के द्वारा उपचारित विद्यार्थियों के हिन्दी साहित्य विषय में

उपलब्धि के समायोजित माध्य फलांक का मान 65.98 है, जो कि परम्परागत शिक्षण विधि समूह के विद्यार्थियों के हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि के समायोजित माध्य फलांक 46. 50 से सार्थक रूप से उच्च है, जबकि हिन्दी साहित्य विषय में पूर्व उपलब्धि को सहप्रसरक के रूप में लिया गया हो। अतः निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि स्व–अनुदेशन सामग्री के द्वारा दिया गया उपचार, परम्परागत शिक्षण विधि से हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि के संदर्भ में सार्थक रूप से प्रभावी पाया गया, जबकि हिन्दी साहित्य विषय में पूर्व उपलब्धि को सहप्रसरक के रूप में लिया गया हो।

2. विद्यार्थियों की हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि पर शिक्षण विधि, बुद्धि एवं उनकी अन्तर्क्रिया का प्रभाव, जबकि हिन्दी साहित्य विषय में पूर्व उपलब्धि को सहप्रसरक के रूप में लिया गया हो।

प्रस्तुत शोध की तृतीय परिकल्पना थी– ''विद्यार्थियों की हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि पर शिक्षण विधि, बुद्धि एवं उनकी अन्तर्क्रिया का कोई सार्थक प्रभाव नहीं होगा जबकि हिन्दी साहित्य विषय में पूर्व उपलब्धि को सहप्रसरक के रूप में लिया गया हो''। यहां दो स्वतंत्र परिवर्ती थे– 'शिक्षण विधि' एवं 'बुद्धि'। शिक्षण विधि के दो स्तर थे– स्व–अनुदेशन सामग्री एवं परम्परागत शिक्षण विधि। इसी प्रकार बुद्धि परिवर्ती के भी दो स्तर थे– उच्च बुद्धि एवं निम्न बुद्धि। मानदण्ड परीवर्ती 'विद्यार्थियों के हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि' थी। 'हिन्दी साहित्य विषय में पूर्व उपलब्धि' को सहप्रसरक के रूप में लिया गया था। अतः इस उद्देश्य से संबंधित प्रदत्तों का विश्लेषण 'द्विमार्गीय सहप्रसरण विश्लेषण' (Two way Analysis of Co-variance) की सहायता से किया गया। विश्लेषण से प्राप्त परिणाम तालिका 5.3 में दिए गए हैं।

तालिका 5.3 : महाविद्यालय स्तर के विद्यार्थियों के हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि के संदर्भ में '2 x 3 कारकीय प्राकल्प द्विमार्गीय सहप्रसरण विश्लेषण' (2 x 3 Factorial Design of Two way Analysis of Co-variance) का सारांश, जबकि हिन्दी साहित्य विषय में पूर्व उपलब्धि को सहप्रसरक के रूप में लिया गया हो।

विचरण के स्रोत	स्वतंत्रता की कोटि (df)	वर्गों का योग (SS)	वर्गों का माध्य योग (MSS)	एफ मान (F Value)	सार्थकता स्तर (LOS)
शिक्षण विधि	1	14826.30	14826.30	147.33**	0.00
बुद्धि	1	616.49	616.49	6.13 *	0.014
शिक्षण विधि एवं बुद्धि की अन्तर्क्रिया	1	217.73	217.73	2.16- NS	0.143
त्रुटि	195	19623.37	100.63		
योग	198				

**- 0.01 सार्थकता स्तर पर सार्थक

*- 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक

NS- 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक नहीं

तालिका 5.3 से स्पष्ट होता है, कि शिक्षण विधि के लिए समायोजित 'F' का मान 147.33 है, जिसके लिए सार्थकता स्तर का मान स्वतंत्रता की कोटि (df) =1/195 पर 0.00 है, जो कि सार्थकता के स्तर 0.01 से छोटा है, अतः शिक्षण विधि के लिए समायोजित 'F' का मान सार्थकता के स्तर 0.01 पर सार्थक है। अर्थात् स्व–अनुदेशन सामग्री एवं परम्परागत शिक्षण विधि समूह के विद्यार्थियों के हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि के समायोजित माध्य फलांकों में सार्थक अन्तर है, जबकि हिन्दी साहित्य विषय में पूर्व उपलब्धि को सहप्रसरक के रूप में लिया गया हो। अतः इस परिस्थिति में शून्य परिकल्पना ''स्व–अनुदेशन सामग्री एवं परम्परागत शिक्षण विधि समूह के विद्यार्थियों के हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि के समायोजित माध्य फलांको में कोई सार्थक अन्तर नहीं होगा जबकि हिन्दी साहित्य विषय में पूर्व उपलब्धि को सहप्रसरक के रूप में लिया गया हो'' निरस्त की जाती है। आगे स्पष्ट है कि स्व–अनुदेशन सामग्री के द्वारा उपचारित विद्यार्थियों के हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि के समायोजित माध्य फलांक का मान 64.11 है, जो कि परम्परागत शिक्षण विधि समूह के विद्यार्थियों के हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि के समायोजित माध्य फलांक 46.77 से सार्थक रूप से उच्च है, जबकि हिन्दी साहित्य विषय में पूर्व उपलब्धि को सहप्रसरक के रूप में लिया गया हो। अतः निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि स्व–अनुदेशन सामग्री के द्वारा दिया गया उपचार, परम्परागत शिक्षण विधि से हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि के संदर्भ में सार्थक रूप से प्रभावी पाया गया, जबकि हिन्दी साहित्य विषय में पूर्व उपलब्धि को सहप्रसरक के रूप में लिया गया हो।

तालिका 5.3 से स्पष्ट होता है, कि बुद्धि के लिए 'F' का मान 6.13 है, जिसके लिए सार्थकता स्तर का मान स्वतंत्रता की कोटि (df) =1/195 पर 0.014 है, जो कि सार्थकता के स्तर 0.05 से छोटा है, अतः बुद्धि के लिए समायोजित 'F' का मान सार्थकता के स्तर 0.05 पर सार्थक है। अर्थात् स्नातक स्तर के उच्च एवं निम्न बुद्धि वाले विद्यार्थियों के हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि के माध्य फलांकों में सार्थक अन्तर है। अतः इस परिस्थिति में शून्य परिकल्पना ''स्नातक स्तर के उच्च एवं निम्न बुद्धि वाले विद्यार्थियों के हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि के माध्य फलांकों में कोई सार्थक अन्तर नहीं होगा'' निरस्त की जाती है। आगे स्पष्ट है कि उच्च बुद्धि वाले विद्यार्थियों के हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि के समायोजित माध्य फलांक का मान 57.20 है, जो कि निम्न बुद्धि वाले विद्यार्थियों के हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि के समायोजित माध्य फलांक 53.68 से सार्थक रूप से उच्च है, जबकि हिन्दी साहित्य विषय में पूर्व उपलब्धि को सहप्रसरक के रूप में लिया गया हो। अतः निष्कर्ष रूप

से कहा जा सकता है कि उच्च बुद्धि वाले विद्यार्थियों की हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि, निम्न बुद्धि वाले विद्यार्थियों की हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि से सार्थक रूप से उच्च पायी गयी।

तालिका 5.3 से स्पष्ट होता है, कि शिक्षण विधि एवं बुद्धि की अन्तक्रिया के लिए 'F' का मान 2.16 है, जिसके लिए सार्थकता स्तर का मान स्वतंत्रता की कोटि (df)=1/195 पर 0.143 है, जो कि सार्थकता के स्तर 0.05 से बड़ा है, अतः शिक्षण विधि एवं लिंग की अन्तर्क्रिया के लिए समायोजित 'F' का मान सार्थकता के स्तर 0.05 पर सार्थक नहीं है। अर्थात् शिक्षण विधि एवं बुद्धि की अन्तर्क्रिया का हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं है। अतः इस परिस्थिति में शून्य परिकल्पना ''स्नातक स्तर के विद्यार्थियों की हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि पर शिक्षण विधि एवं बुद्धि की अन्तर्क्रिया का कोई सार्थक प्रभाव नहीं होगा'' निरस्त नहीं की जाती है। अतः निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि स्नातक स्तर के विद्यार्थियों की हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि पर शिक्षण विधि एवं बुद्धि की अन्तर्क्रिया का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पाया गया। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि हिन्दी साहित्य विषय पर निर्मित स्व–अनुदेशन सामग्री, स्नातक स्तर के उच्च एवं निम्न बुद्धि वाले विद्यार्थियों की हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि के संदर्भ में एक समान रुप से प्रभावी पायी गयी।

3. निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध के अध्ययन से निम्नानुसार निष्कर्ष प्राप्त हुए–

1. स्व–अनुदेशन सामग्री के द्वारा दिया गया उपचार, परम्परागत शिक्षण विधि से हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि के संदर्भ में सार्थक रूप से प्रभावी पाया गया, जबकि हिन्दी साहित्य विषय में पूर्व उपलब्धि को सहप्रसरक के रूप में लिया गया हो।
2. उच्च बुद्धि वाले विद्यार्थियों की हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि, निम्न बुद्धि वाले विद्यार्थियों की हिन्दी साहित्य विषय में उपलब्धि से सार्थक रूप से उच्च पायी गयी।

4. भविष्य में शोध हेतु सुझाव

प्रस्तुत शोध के परिणाम यह बताते हैं कि हिन्दी साहित्य विषय को पढ़ाने के लिए अनुदेशन सामग्री का उपयोग किया जा सकता है। अनुदेशन सामग्री के उपयोग से विद्यार्थियों का अधिगम बेहतर होता है। इसे विद्यार्थी अपनी गति से पढ़ सकते हैं। हिन्दी साहित्य विषय के विद्यार्थियों की उपलब्धि व्याख्यान विधि की तुलना में अनुदेशन सामग्री के द्वारा अधिक पायी गयी तथा अनुदेशन सामग्री के प्रति उनकी प्रतिक्रियाएं भी सकारात्मक थीं। अतः इसके निम्न शैक्षिक निहितार्थ हो सकते हैं–

1. अपेक्षाकृत बड़े न्यादर्श और मध्यप्रदेश के बाहर प्रस्तुत शोध कार्य को दोहराया जा सकता है।
2. प्रस्तुत शोध कार्य विशिष्ट बच्चों के अन्य वर्गों जैसे– प्रतिभाशाली, मानसिक चुनौती वाले, अधिगम निर्योग्य, सृजनात्मक, सामाजिक–आर्थिक दृष्टि से अपवंचित बच्चों पर किया जा सकता है।
3. अन्य परिवर्तियों जैसे– अभिक्षमता, तार्किक योग्यता, आकांक्षा स्तर, व्यक्तित्व, अधिगम शैली, अध्ययन आदत, पठन अवबोध, मूलभूत शैक्षिक संकाय आदि पर शोध किया जा सकता है।
4. अस्थिबाधित एवं दृष्टिबाधित व श्रवणबाधित बच्चों के मध्य भविष्य में तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है।
5. प्रस्तुत अध्ययन सामग्री प्रभावी पायी गयी। अतः दूरस्थ शिक्षा के विभिन्न पाठ्यक्रमों में इस प्रकार की सामग्री का उपयोग किया जा सकता है।
6. ऐसे विद्यार्थी जिन्होंने पूर्व में हिन्दी साहित्य विषय नहीं पढ़ा है, वे भी इस सामग्री को पढ़कर लाभान्वित हो सकते हैं।
7. देश में ज़्यादातर शिक्षण संस्थाओं में अध्यापकों की कमी है। अतः उनके अनुपस्थित रहने पर ऐसी अनुदेशन सामग्रियों का उपयोग किया जा सकता है।
8. महाविद्यालयीन स्तर पर प्रायः शिक्षकों द्वारा व्याख्यान विधि का प्रयोग किया जाता है अतः अनुदेशन सामग्री का उपयोग कर विद्यार्थियों को अधिक सक्रिय बनाए रखा जा सकता है और उनकी अध्ययन में रुचि उत्पन्न की जा सकती है।

संदर्भ

1. Buch M.B. (Ed.): First Survey of Research in Education. Baroda: Centre of Advanced Study in Education, 1974.
2. Buch, M. B. (Ed.): Second Survey of Research in Education (1972-1978), Baroda: Society for Educational Research and Development, 1979.
3. Buch, M. B. (Ed.): Third Survey of Research in Education (1978-1983), New Delhi: NCERT, 1986.
4. Buch, M. B. (Ed.): Forth Survey of Research in Education (1983-1988)- Vol I & II. New Delhi: NCERT, 1991.
5. Garrett, H. E.: Statistics in Psychology and Education. Ludhiyana: Kalyani Publishers, 2010.
6. Fifth Survey of Research in Education-Vol I (1988-1992), 1997, New Delhi: NCERT.
7. Fifth Survey of Research in Education-Vol II (1988-1992), 2000, New Delhi: NCERT.
8. Sixth Survey of Research in Education-Vol I (1993-2000), 2006, New Delhi: NCERT.
9. Sixth Survey of Research in Education-Vol II (1993-2000), 2007, New Delhi: NCERT.
10. पाल, एच. आर. (2006): उच्च शिक्षा में अध्यापन एवं प्रशिक्षण की प्रविधियां. हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली।

11. पाल, एच. आर. (2006): प्रगत शिक्षा मनोविज्ञान, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली।
12. पाल, एच. आर. (2006): पाठ्यचर्चा – कल, आज और कल, क्षिप्रा प्रकाशन, दिल्ली।
13. शर्मा, आर. ए. (1969): अनुदेशनात्मक एवं शिक्षण तकनीकी, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ।
14. शर्मा, आर. ए. (1983): शिक्षण अधिगम में नवीन प्रवर्तन, लायल बुक डिपो, मेरठ।
15. गुप्त, एम. (1985): भाषा शिक्षण सिद्धांत एवं प्रविधि, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा।
16. तिवारी, पी. (1986): भाषा विज्ञान, रेल्वे क्रासिंग, सीतापुर रोड, लखनऊ।
17. दुबे व अन्य (2009): प्रयोजनमूलक हिन्दी. मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
18. शर्मा, बी.एन. (2000): हिन्दी शिक्षण साहित्य प्रकाशन, आगरा।
19. सिंह, एस. (2004): हिन्दी शिक्षण, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ।
20. सिंह, एन.के. (1990): माध्यमिक विद्यालय में हिन्दी शिक्षण राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।
21. कौशिक, जे. (2001): हिन्दी शिक्षण, हरियाणा साहित्य अकादमी, पंचकूला।
22. लाल, बी.एन. (2000): हिन्दी शिक्षण साहित्य प्रकाशन, आगरा।
23. मिश्रा, डी. एवं तिवारी पी. (1986): हिन्दी साहित्य का इतिहास, रेल्वे क्रासिंग, सीतापुर रोड, लखनऊ।
24. मिश्र आर. एवं शर्मा आर. (2005): प्रयोजनमूलक हिन्दी के विविध रूप, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली।

मेरे मन में धार्मिक कट्टरता एवं मताग्रह के लिए कोई आकर्षण नहीं है और मुझे खुशी है कि वे कमजोर हो रहे हैं। न ही मुझे किसी भी रुप या आकार में सांप्रदायिकता पसंद है। मुझे यह समझने में कठिनाई होती है कि राजनीति या आर्थिक अधिकार किसी व्यक्ति के किसी धार्मिक समूह या समुदाय का सदस्य होने पर क्यों निर्भर होने चाहिए? अपने धर्म व संस्कृति के अनुसार जीवन–पद्धति अपनाने के अधिकार को मैं अच्छी तरह समझ सकता हूं और विशेष रुप से भारत, जिसने हमेशा इस अधिकार को माना और प्रदान किया, उसे जारी रखने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए।

– पं. जवाहरलाल नेहरु

निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम वंचित वर्ग और निजी शिक्षण संस्थाओं के लिए एक सार्थक पहल

— दीपक कुमार योगी

शिक्षा विकसित समाज के निर्माण लिए एक आधारभूत आवश्यकता है। यह नींव का वह पत्थर है जिस पर शिक्षित समाज विकसित होता है। यही शिक्षित समाज आगे चलकर एक विकसित समाज में स्वयं को रुपांतरित करता है। क्रमिक विकास का यह सर्वविदित तथ्य है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व और इसके दशकों बाद तक हमारा देश साक्षरता के क्षेत्र में बहुत पीछे था परन्तु धीरे–धीरे इस क्षेत्र में हमने उल्लेखनीय प्रगति की है। सन् 1951 में भारत की औसत साक्षरता 18.33 प्रतिशत थी जो सन् 2011 तक आते आते 73.64 प्रतिशत हो गई।

राजस्थान प्रदेश के बारे में यदि बात करें तो स्थिति और भी दयनीय थी, विशेषकर महिला साक्षरता के आंकडे तो शर्मनाक थे। सन् 1951 में प्रदेश की औसत साक्षरता दर महज 8.5 प्रतिशत थी। इसमें धीमी गति से सुधार होता रहा। सन् 2011 की जनगणना के आंकडों में प्रदेश में साक्षरता की स्थिति में सम्मानजनक सुधार प्रदर्शित हुआ और यहां की औसत साक्षरता दर 67.06 प्रतिशत तक पहुंची। लेकिन तब भी राजस्थान में महिला साक्षरता दर (52.7 प्रतिशत) तथा पुरुष साक्षरता दर (85.5) में 27.8 प्रतिशत का अन्तर विद्यमान रहा। इस चुनौती के बावजूद प्रदेश ने जो शैक्षणिक प्रगति की है उसमें अनौपचारिक शिक्षा अभियान, साक्षरता कार्यक्रम, लोक जुम्बिश जैसे सरकारी कार्यक्रमों ने निश्चित ही महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है पर इस समूचे उपलब्धि में निजी विद्यालयों के सहयोग को भी अनदेखा नहीं किया जा सकता है। प्रदेश में कुछ गिनी–चुनी ग्राम पंचायतें ही ऐसी होंगी जहां कोई निजी विद्यालय नहीं होगा। पूरे प्रदेश में आज निजी विद्यालय बड़े पैमाने पर शिक्षा की अलख जगा रहे हैं। ये विद्यालय एक ओर तो सरकार के शिक्षा विभाग के दबाब को कम कर रहे हैं वहीं दूसरी ओर अपने सीमित संसाधनों से निजी क्षेत्र में बहुत बडी संख्या में लोगों को रोजगार प्रदान कर रहे हैं।

किसी महापुरुष ने कहा है कि यदि कोई व्यक्ति एक विद्यालय खोलता है तो कई जेल बंद करता है। इस तरह से यदि हम निजी विद्यालयों के संचालकों की भूमिका को देखें तो वाकई में वे समाज में शिक्षा के प्रचार–प्रसार में बहुमूल्य योगदान प्रदान कर रहे हैं। यह जरुर है कि अच्छे और बुरे व्यक्ति हर जगह होते हैं। इसलिए यह क्षेत्र भी कोई अपवाद नहीं है। परन्तु फिर भी यदि सूक्ष्मता से देखें तो पायेगें कि एक सरकारी विद्यालय की स्थापना से लेकर संचालन में जितना व्यय होता है उसकी तुलना में बहुत कम राशि खर्च कर अनगिनत

व्यक्ति या संस्थान निजी विद्यालयों की स्थापना कर उसे संचालित कर रहे हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में तो नाममात्र के शुल्क पर स्थानीय युवा निजी विद्यालयों के माध्यम से अपने गांव के बच्चों को शिक्षा उपलब्ध करवा रहे हैं। शहरी क्षेत्रों में निजी विद्यालयों का शुल्क बहुत अधिक है लेकिन ये विद्यालय अपने खर्च के अनुरुप सुविधाएं भी प्रदान करते हैं। कई नामी – गिरामी विद्यालयों में तो शुल्क के साथ–साथ दान अथवा विकास शुल्क के नाम पर बहुत बड़ी राशि ली जाती है। परन्तु आश्चर्य की बात तो यह है कि अभिभावक फिर भी इन विद्यालयों में अपने बच्चों को प्रवेश दिलाने के लिए आतुर रहते हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि निजी क्षेत्र के प्रतिष्ठित विद्यालयों में अध्ययन करना विद्यार्थियों के लिये ही नहीं बल्कि उनके अभिभावकों के लिये भी गौरव की बात होती है। लेकिन इन तथाकथित प्रतिष्ठित विद्यालयों में केवल समाज का उच्चवर्ग ही अपने बच्चों को प्रवेश दिला पाता है, मध्यम एवं निम्नवर्ग के लोगों के लिए इन विद्यालयों में अपने बच्चों को प्रवेश दिलाना एक दिवा स्वप्न मात्र ही होता है।

वर्ष 2009 में निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम लागू होने के पश्चात प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में बहुत बड़ा परिवर्तन आया। अधिनियम की भावना के अनुरुप अब भारत में 6 से लेकर 14 वर्ष के सभी बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है। इस अधिनियम के अनुसार इन सभी बच्चों को शिक्षा दिलवाने की जिम्मेदारी सरकार और माता–पिता पर है।

निजी विद्यालयों की महत्वपूर्ण भूमिका को देखते हुए शिक्षा अधिकार अधिनियम के तहत प्रत्येक निजी विद्यालय में एन्ट्री लेवल अर्थात प्रारम्भिक प्रवेश के स्तर पर निर्धारित कुल सीटों में से 25 प्रतिशत सीटों को दुर्बल एवं असुविधाग्रस्त वर्ग के बालकों के लिये आरक्षित कर दिया गया है। अब प्रत्येक निजी विद्यालय के लिए एन्ट्री लेवल पर आरक्षित सीटों पर दुर्बल एवं असुविधाग्रस्त वर्ग के बालकों को प्रवेश देना अनिवार्य हो गया है। इस प्रकार यह अधिनियम वंचित वर्ग के बच्चों को स्थानीय स्तर पर प्रतिष्ठित निजी विद्यालयों में अध्ययन करने का सुअवसर प्रदान कर रहा है और वह भी निःशुल्क। इन बच्चों के विद्यालय शुल्क का पुनर्भरण सरकार द्वारा किया जा रहा है।

विगत तीन वर्षों से राजस्थान प्रदेश में निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा के तहत निजी विद्यालयों में दुर्बल एवं असुविधाग्रस्त बालकों को वेब पोर्टल के माध्यम से प्रवेश दिया जाता है। इस वर्ग के तहत प्राप्त आवेदनो में से उपयुक्त बच्चों का चयन एकीकृत लाटरी के माध्यम से किया जाता है जिसकी घोषणा विद्यालय द्वारा वेब पोर्टल पर ही कर दी जाती है। इसके पश्चात शिक्षा विभाग के अधिकारियों द्वारा निजी विद्यालय में जाकर निःशुल्क प्रवेश प्राप्त बालक–बालिकाओं का भौतिक सत्यापन एवं उनके निवास, जाति, जन्म और आय से संबंधित प्रमाण पत्रों का अवलोकन किया जाता है। निजी विद्यालयों को भौतिक निरीक्षण के

पश्चात संबंधित अधिकारियों द्वारा की जाने वाली अनुशंसा के अनुसार सरकार द्वारा निःशुल्क प्रवेशित छात्र–छात्रा का निर्धारित शुल्क दो किश्तों में पुनर्भरण के लिये जारी किया जाता है।

अधिनियम के क्रियान्वयन के प्रारम्भिक चरणों में पूरी प्रक्रिया को अनेक विरोधों का सामना करना पडा था। शहरी क्षेत्र में तथाकथित बड़े निजी विद्यालय अपने यहां दुर्बल एवं असुविधाग्रस्त वर्ग के बालकों को प्रवेश देना नहीं चाहते थे और ना ही वे शिक्षा विभाग के अधिकारियों को भौतिक सत्यापन करने में कोई सहयोग करते थे। इसके पीछे उनका तर्क था कि सरकार से प्राप्त होने वाली पुनर्भरण राशि उनके विद्यालय द्वारा वसूल किए जाने वाले शुल्क से बहुत कम है। इस प्रकार शिक्षा के अधिकार अधिनियम के तहत दिए गए प्रवेश उनके लिए आर्थिक रुप से हानिकारक होगा। यहां निजी विद्यालयों के शुल्क निर्धारण को लेकर नया विवाद खडा हो गया। प्रदेश में शुल्क निर्धारण समिति बनी परन्तु नतीजा कुछ खास नहीं निकला और स्थिति जस के तस बनी रही। परन्तु इस अधिनियम के तहत निःशुल्क प्रवेश प्राप्त करने वाले छात्र–छात्रा अन्ततः इस नाटकीय घटनाक्रम के शिकार नहीं हुए और ना ही इस प्रक्रिया में कोई अवरोध उत्पन्न हुआ।

ग्रामीण क्षेत्र की स्थिति इससे बहुत भिन्न है। यहां रहने वाले किसान, मजदूर और असंगठित क्षेत्र के कामगार निजी विद्यालयों को ज्यादा शुल्क नहीं दे पाते जिसका सीधा असर ग्रामीण निजी विद्यालयों पर पडता है। उपयुक्त आय के अभाव में ग्रामीण निजी विद्यालय भवन, पुस्तकालय, खेल मैदान, बालक–बालिकाओं के लिये पृथक शौचालय जैसी भौतिक सुविधाएं विकसित नहीं कर पाते जिससे गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा के लिए आवश्यक वातावरण निर्माण में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। ऐसे में ग्रामीण निजी विद्यालयों के संचालक धन्यवाद के पात्र हैं कि बहुत कम आय होते हुये भी वे सफलतापूर्वक विद्यालय संचालित किए जा रहे हैं। इस हालात में सुधार के लिए सरकार द्वारा ग्रामीण निजी विद्यालयों को आवश्यक समर्थन एवं सहयोग प्रदान किया जाना ताकि वे निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा अधिकार अधिनियम के तहत दुर्बल एवं असुविधाग्रस्त बालक–बालिकाओं को प्रवेश प्रदान करते हुए भी उन्हें निर्धारित भवन आदि भौतिक सुविधाएं उपलब्ध करवा सकें। भौतिक सुविधाओं के उन्नयन का प्रत्यक्ष प्रभाव निश्चितरुप से शिक्षा की गुणवत्ता पर भी पडेगा।

ग्रामीण क्षेत्रों में एक बड़ा परिवर्तन निजी विद्यालयों में गरीब परिवार के बच्चों की बढ़ती उपस्थिति के रुप में भी देखा जा सकता है। शिक्षा अधिकार अधिनियम लागू होने से पूर्व ग्रामीण क्षेत्र के गरीब परिवारों के बच्चे शायद ही निजी विद्यालयों में अध्ययन का अवसर प्राप्त कर पाते थे। इसका मूल कारण गरीब परिवार के बच्चों की आर्थिक असमर्थता होती थी। अब स्थिति बदल गई है। शिक्षा अधिकार अधिनियम ने कम ही सही पर एक निश्चित प्रतिशत

में दुर्बल एवं असुविधाग्रस्त परिवारों के बच्चों की निजी विद्यालयों में प्रवेश को अनिवार्य बना दिया है। यही कारण है कि अब सत्र आरम्भ होने के साथ ही निजी विद्यालयों के संचालक भी गांव के दुर्बल एवं असुविधाग्रस्त परिवारों की चौखट पर पंहुच जाते हैं, उनके नौनिहालों को अपने विद्यालय में निःशुल्क प्रवेश दिलाने का न्यौता लेकर। संचालकों को ज्ञात है कि अब इन बच्चों का शुल्क सरकार देगी। यदि गांव में दो–तीन निजी विद्यालय हैं तो सरकार ने इस अधिनियम के माध्यम से गांव के गरीब व्यक्ति को विद्यालय चयन का अधिकार और स्वतंत्रता भी उपलब्ध कराया है ताकि वह सोच–समझकर अपने क्षेत्र के किसी भी निजी विद्यालय का अपनी सुविधानुसार चयन कर सके। इस प्रकार यदि देखा जाए तो निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम गरीब परिवारों को शिक्षित होने का ही नहीं बल्कि अपने क्षेत्र के सबसे अच्छे निजी विद्यालय के चयन करने का अधिकार भी उपलब्ध करा रहा है। इतना ही नहीं यदि कोई निजी विद्यालय इस वर्ग के बच्चों को प्रवेश देने में आनाकानी करे तो अभिभावक के पास आनलाईन आवेदन का विकल्प भी खुला है। किसी भी कम्प्युटर सुविधा केन्द्र पर जाकर वे इन विद्यालयों में निःशुल्क प्रवेश के लिए आवेदन कर सकते हैं। आवेदन के उपरान्त चयन प्रक्रिया को भी पारदर्शी बनाया गया है। किसी भी विद्यालय द्वारा निःशुल्क प्रवेश के लिये प्राप्त सभी आवेदनों में से पात्र छात्र–छात्राओं का चयन शिक्षा विभाग द्वारा लाटरी निकाल कर किया जाता है। इस प्रकार शिक्षा अधिकार अधिनियम के तहत कोई भी निजी विद्यालय किसी भी छात्र–छात्रा को प्रवेश के लिये आवेदन करने में आनाकाना नहीं कर सकता।

प्रदेश के शहरी इलाकों में सरकार द्वारा निजी विद्यालयों को निःशुल्क प्रवेश प्राप्त करने वाले छात्र–छात्राओं के शुल्क की प्रतिपूर्ति के रुप में विगत सत्र में लगभग पन्द्रह हजार रुपये अधिकतम प्रति लाभान्वित, की निर्धारित दर से भुगतान किया गया। चूंकि ग्रामीण क्षेत्र के निजी विद्यालयों का शुल्क अपेक्षाकृत कम होता है इसलिए ग्रामीण क्षेत्र के निजी विद्यालयों को सरकार द्वारा भुगतान की गई राशि सरकारी विद्यालयों में पढ़ रहे विद्यार्थियों पर सरकार द्वारा किए जा रहे प्रति छात्र व्यय से बहुत कम है। इस प्रकार सरकार के लिये भी तुलनात्मक रुप से यह अधिनियम लाभ का सौदा ही साबित हुआ है।

बहरहाल इस अधिनियम के क्रियान्वयन को अभी कुछ ही समय हुआ है। इस अल्प अवधि में भी बहुत काम हुआ है। उपलब्धियों की नजर से देखें तो यह कहना गलत नहीं होगा कि निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्र में गरीब तबकों के लिए और निजी विद्यालयों के लिये सरकार द्वारा की गई एक सार्थक पहल साबित हुई है। इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि इस क्षेत्र की सभी समस्याएं समाप्त हो गई हैं। अभी भी बहुत सारे मुद्दे ऐसे हैं जिन्हे सुलझाया जाना बाकि है।

नई तालीम

— मोहनदास करमचंद गांधी

(देश के शैक्षिक विकास के बारे में महात्मा गांधी के अपने मौलिक विचार थे जिसे उन्होंने अपने भाषणों एवं लेखों के माध्यम से लगातार देश के तत्कालीन नेतृत्व एवं समाज के समक्ष रखा शिक्षा। 'नई तालीम' के तहत से उन्होंने शिक्षा के उस स्वरुप को सामने रखने का प्रयास किया जिसके माध्यम से एक ओर सम्पूर्ण देश तो दूसरी ओर देश के सभी नागरिक निजी एवं राष्ट्रीय जीवन में स्वावलम्बी होकर उभर सकें। आज गांधी का यह चिन्तन पहले सें कहीं ज्यादा प्रासंगिक है। प्रस्तुत है उस लेख का सम्पूर्ण कलेवर, साभार : ग्राम स्वराज्य)

आमतौर पर नई तालीम का अर्थ लिया जाता है — उद्योग द्वारा शिक्षा देना। लेकिन यह कुछ अंश तक ही ठीक है। नई तालीम की जड़ इससे गहरी जाती है। उसका आधार है — सत्य और अहिंसा। व्यक्तिगत जीवन और सामाजिक जीवन, दोनों में ये दो ही उसके आधार हैं। विद्या वह है जो मुक्ति दिलानेवाली हो — 'सा विद्या या विमुक्तये'। झूठ और हिंसा तो बंधक कारक हैं। उनका शिक्षा में कोई स्थान नहीं हो सकता। कोई धर्म यह नहीं सिखाता कि बच्चों को असत्य और हिंसा की शिक्षा दो। सच्ची शिक्षा हर एक को सुलभ होनी चाहिए। वह कुछ लाख शहरियों के लिए ही नहीं, बल्कि करोड़ों देहातियों के लिए भी उपयोगी होनी चाहिए। ऐसी शिक्षा कोरी पोथियों से थोड़े मिल सकती है। उसका सांप्रदायिक धर्म से भी कोई संबंध नहीं हो सकता। वह तो धर्म के उन विश्वव्यापी सिद्धांतों की शिक्षा देती है, जिनमें से सब संप्रदायों के धर्म निकले हैं। यह शिक्षा तो जीवन की पुस्तक से मिलती है। उसके लिए कुछ खर्च नहीं करना पड़ता और उसे ताकत के जोर से कोई छीन नहीं सकता।

प्राथमिक शिक्षा के बारे में मेरा यह दृढ़ मत है कि वर्णमाला तथा वाचन और लेखन से शिक्षा का प्रारंभ करने से बालकों की बुद्धि का विकास कुंठित—सा हो जाता है। जब तक उन्हें इतिहास, भूगोल, गणित और कताई की कला का प्रारंभिक ज्ञान न हो जाए तब तक मैं उन्हें वर्णमाला नहीं सिखाऊँगा। इन तीन चीजों के द्वारा मैं उनकी बुद्धि को विकसित करूँगा। यह प्रश्न पूछा जा सकता है कि तकली या चरखे के द्वारा किस तरह बुद्धि विकसित की जा सकती? अगर यह कला महज यंत्र की तरह न सिखाई जाए तो वह आश्चर्यजनक रीति से बुद्धि का विकास कर सकती है, जब आप बालक को हर एक क्रिया का ठीक—ठीक कारण समझाएँगे, जब आप उसे कपास और सभ्यता के साथ उसके संबंध के इतिहास का ज्ञान देंगे और अपने साथ उसे गाँव के कपास के खेत में ले जाएंगे और जब आप उसे उसके काते हुए सूत की समानता और मजबूती जानने का तरीका या तार गिनना सिखाएंगे तब आप उसका दिल तो कताई की कला की तरफ आकर्षित करेंगे ही, साथ ही उसके हाथों, उसकी आँखों और उसकी बुद्धि को भी

साधते जाएंगे। इस प्रारंभिक शिक्षा को मैं छह महीने दूंगा। इतने समय में बालक शायद यह सीखने के लिए तैयार हो जाएगा कि वर्णमाला किस तरह पढ़ी जाती है; और जब वह वर्णमाला जल्दी–जल्दी पढ़ने के योग्य हो जाएगा, तो वह सादा ड्राइंग सीखने के लिए तैयार हो जाएगा। और जब वह रेखागणित की शक्लें तथा चिड़ियों वगैरह के चित्र खींचने लगेगा, तो वह अक्षरों को बिगाड़कर नहीं लिखेगा। मुझे अपने बचपन के दिन याद हैं, जब मुझे वर्णमाला सिखाई जाती थी। मैं जानता हूँ कि मुझे कितनी कठिनाई पड़ती थी। किसी को यह परवाह नहीं थी कि मेरी बुद्धि पर क्यों जंग लगाया जा रहा है! लेखन–कला को मैं एक ललित कला मानता हूँ। छोटे–छोटे बच्चों की बुद्धि पर वर्णमाला को लादकर और उसे शिक्षा का श्रीगणेश मानकर हम इस कला का गला घोट देते हैं। इस तरह हम लेखन–कला के साथ हिंसा करते हैं और योग्य समय के पहले ही वर्णमाला सिखाने का प्रयत्न करके हम बालक की बढ़त को मार देते हैं।

जुदा–जुदा विषयों पर मेरी जो तजवीजें हैं, उनमें हाथ अक्षर बनाने या लिखने की कोशिश करने के पहले औजार चलाने का काम करेंगे। आंखें जैसे जिंदगी की दूसरी चीजें देखती हैं, उसी तरह अक्षरों और शब्दों का चित्र देखेंगी; कान चीजों और वाक्यों के नाम एवं अर्थ को समझेंगे। सारी शिक्षा कुदरती और रस पैदा करनेवाली होगी और इसीलिए देश की सब शिक्षाओं से तेज रफ्तार वाली तथा सस्ती रहेगी। इसलिए मेरे स्कूल के लड़के जितनी तेज रफ्तार से लिखेंगे, उससे भी अधिक तेज रफ्तार से वे पढ़ने लगेंगे। और जब ये लिखना शुरू करेंगे, तो भद्दी लकीरें नहीं खीचेंगे, जैसे कि मैं अब तक (शिक्षकों की कृपा से) खींचता रहता हूँ, बल्कि जिस तरह वे अपने को दिखाई देने वाली दूसरी चीजों की ठीक शक्लें खींच सकेंगे, उसी तरह अक्षरों की भी ठीक शक्ल बना सकेंगे। अगर मेरे कयास के स्कूल कभी कायम हों तो मैं यह कहने का साहस करता हूं कि वाचन के मामले में वे सबसे आगे बढ़े हुए स्कूलों के साथ होड़ कर सकेंगे; और अगर यह आम खयाल हो कि लिखावट, जैसी कि आजकल ज्यादातर मामलों में होती है, वैसी गलत नहीं, बल्कि सही तरीके की हो तो लिखावट में भी मेरे ये स्कूल आज के उन्नत–से उन्नत स्कूल की बराबरी कर सकेंगे।

लड़कों और लड़कियों का सर्वतोमुखी विकास हो, इसलिए सारी शिक्षा जहां तक हो सके, ऐसे उद्योग द्वारा दी जानी चाहिए, जिसमें कुछ उपार्जन भी हो। इसे यों भी कह सकते हैं कि इस उद्योग द्वारा दो हेतु सिद्ध होने चाहिए – एक तो विद्यार्थी उस उद्योग की उपज और अपने श्रम से अपनी पढ़ाई का खर्च अदा कर सकें और दूसरे स्कूल में सीखे हुए इस उद्योग द्वारा उस लड़के या लड़की में उन सभी गुणों और शक्तियों का पूर्ण विकास हो जाए, जो एक पुरूष या स्त्री के लिए आवश्यक है।

प्राथमिक शिक्षा मेरी नजर में सबसे अधिक महत्वपूर्ण चीज है। उसकी मर्यादा मैंने यही कायम की है कि जितनी पढ़ाई मैट्रिक तक अंग्रेजी को छोड़कर होती है, उतनी ही इसमें हो जानी चाहिए। फर्ज कीजिए कि कॉलेजों के पढ़े हुए और पढ़नेवाले सब लोग एकाएक अपनी सारी

पढ़ाई भूल जाएं तो इन कुछ लाख लोगों के स्मृति–नाश से जितनी हानि हो सकती है, वह उस हानि के मुकाबले में कुछ भी नहीं है, जो उन 30–35 करोड़ लोगों के अज्ञान के सागर जैसे महा अंधकार में डूबे होने की वजह से हो रही है । उस की थाह हम केवल निरक्षरता से होने वाली हानि से कभी नहीं पा सकते।

मैं मानता हूँ कि शिक्षा अनिवार्य और मुफ्त होनी ही चाहिए। पर बालकों को उपयोगी उद्योग देकर उसके मार्फत ही उनके मन और शरीर की शिक्षा होनी चाहिए। मैं यहाँ भी पैसों की गिनती करता हूं, वह अनुचित नहीं है। अर्थशास्त्र नैतिक और अनैतिक दोनों प्रकार का होता है। नैतिक अर्थशास्त्र में दोनों बाजू बराबर होंगी। अनैतिक में जिसकी लाठी उसकी 'भैंस' का न्याय चलता है। इसका प्रमाण कितना हो, यह उसकी ताकत पर आधारित होता है। अनैतिक अर्थशास्त्र जैसे घातक है, वैसे ही नैतिक अर्थशास्त्र आवश्यक है। उसके बिना धर्म की पहचान और उसका पालन मैं असंभव मानता हूँ।

सारी शिक्षा का किसी भी बुनियादी उद्योग के साथ संबंध जोड़ना चाहिए। आप जब किसी उद्योग के द्वारा 7 या 10 वर्ष के बालक को ज्ञान देते हों, तब शुरूआत में इस विषय के साथ जिनका मेल नहीं बैठाया जा सके, ऐसे सब विषय आपको छोड़ देने चाहिए। रोज–रोज ऐसा करने से शुरूआत में छोड़ी हुई ऐसी बहुत सी वस्तुओं का अनुसंधान और उद्योग के साथ जोड़ने के रास्ते आप स्वयं ही ढूँढ़ निकालेंगे। इस तरह आप शुरू में काम लेंगे, तो अपनी खुद की और विद्यार्थियों की शक्ति बचा सकेंगे। आज तो हमारे पास आधार लेने लायक कोई पुस्तक नहीं है, न हमें रास्ता दिखाने वाले पहले के दृष्टांत ही मौजूदा हैं। इसलिए हमें धीरे–धीरे चलना है। मुख्य बात यह है कि शिक्षक को अपने मन की ताजगी बनाए रखनी चाहिए। जिसका उद्योग के साथ मेल न बैठाया जा सके, ऐसा कोई विषय आने पर आप निराश न हों, खीज न उठें, बल्कि उसे छोड़ दें और जिसका मेल बैठा सकें, उसे आगे चलाएं। संभव है कि कोई दूसरा शिक्षक सही रास्ता ढूंढ़ निकाले और उस विषय का उद्योग के साथ कैसे मेल बैठ सकता है, यह बता सके। और जब आप बहुतों के अनुभव का संग्रह करेंगे, तो बाद में आपको रास्ता बताने वाली पुस्तकें भी मिल जाएँगी, जिससे आपके पीछे आनेवालों का काम अधिक सरल बन जाएगा।

क्या आप पूछेंगे कि जिन विषयों का उद्योग के साथ मेल न बैठाया जा सके, उनको टालने की क्रिया कितने समय तक की जाए? तो मैं कहूंगा कि जिंदगी भर। आखिर में आप देखेंगे कि बहुत–सी चीजें, जिन्हें आप पहले शिक्षा–क्रम में से छोड़ चुके थे, उनका आपने उसमें समावेश कर लिया है; जितनी चीजों का समावेश करने लायक था, उन सबका समावेश हो चुका है और आपने आखिर तक जिनको निकम्मी समझकर छोड़ दिया था, वे बहुत निर्जीव और छोड़ने लायक ही थीं। यह मेरा जीवन का अनुभव है। मैंने यदि बहुत–सी चीजें छोड़ न दी होतीं तो मैं जो बहुत–सी चीजें कर सका हूँ, वह नहीं कर सका होता।

अधिगम स्तर आंकलन : एक प्रभावी नवाचार

– उमेश चमोला

विद्यालय में शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया प्रारम्भ करने से पहले एक शिक्षक को कक्षा विशेष में आने वाले विद्यार्थियों के वर्तमान अधिगम स्तर की विस्तृत जानकारी होनी चाहिए। शिक्षार्थियों के पूर्वज्ञान को जाने बिना यदि शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया प्रारम्भ की जाती है तो ऐसे में शिक्षण के अपेक्षित उद्देश्यों को प्राप्त करना संभव नहीं होगा।

एक कक्षा से दूसरी कक्षा के पाठ्यक्रम में क्रमिक रूप से जटिलता बढ़ती जाती है। उच्च प्राथमिक स्तर के अंतर्गत कक्षा 8 उत्तीर्ण करने वाले विद्यार्थी जब कक्षा 9 में प्रवेश लेते हैं तो उन्हें माध्यमिक स्तर के अपेक्षाकृत जटिल पाठ्यक्रम से परिचित होना पड़ता है। परिणामस्वरूप वे तत्काल शिक्षण से अपने को जोड़ नहीं पाते हैं। शिक्षक को भी यह महसूस होता है कि शिक्षार्थी शिक्षण की मुख्यधारा में अपने को सम्मिलित नहीं कर पा रहे हैं और अपेक्षित अधिगम स्तर को प्राप्त करने में असफल हो रहे हैं। इसलिए उच्च प्राथमिक और माध्यमिक स्तर के बीच की खाई को पाटना आवश्यक है। इसी उद्देश्य के मद्देनजर उत्तराखण्ड में 'अधिगम स्तर आकलन कार्यक्रम' एक प्रभावी नवाचार के रूप में संचालित किया गया है। इस संबंध में उत्तराखण्ड शासन, सचिव विद्यालयी शिक्षा का शासनादेश क्रमांक 526/xxiv-3/02(43)2013 दिनांक 23 मार्च 2013 को जारी किया गया था। यह शासनादेश निम्नलिखित तीन बिन्दुओं पर आधारित है–

बिन्दु एक – शिक्षार्थियों को प्रारंभिक स्तरीय अंतिम चक्र (कक्षा 8 से कक्षा 9) में नो डिटेंशन पॉलिसी के आधार पर प्रोन्नत किया जा रहा है। इससे कतिपय विद्यार्थियों को विषयवार माध्यमिक स्तर की पहली सीढ़ी (कक्षा 9) में प्रवेश के उपरांत कक्षा 9 में स्वयं को समायोजित करने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। इससे उनमें शिक्षा के प्रति अज्ञात भय के उत्पन्न होने का खतरा है।

बिन्दु दो – माध्यमिक स्तर पर छात्र–छात्राओं के पूर्व ज्ञान संबंधी अपेक्षित दक्षताओं की जानकारी शिक्षक प्राप्त कर सकें। ताकि, यदि किसी विद्यार्थी की ये दक्षताएं अपेक्षित स्तर की न हों तो माध्यमिक स्तरीय पाठ्यक्रम प्रारम्भ करने से पूर्व उसे इन दक्षताओं को प्राप्त करने हेतु सहयोग प्रदान कर सुधारात्मक शिक्षण किया जा सके।

बिन्दु तीन – अपेक्षित अधिगम स्तर हेतु दक्षताओं के चिह्नांकन के उपरांत विषयवार प्रश्नपत्र निर्माण व अन्य परीक्षण विधियों द्वारा छात्र–छात्राओं के अधिगम स्तर को जाना जाए। इतना ही नहीं मूल्यांकन के उपरांत उक्त अपेक्षित संप्राप्ति स्तर को प्राप्त न कर सकने वाले विद्यार्थियों के लिए शुरुआत के दो माहों में उपचारात्मक/सुधारात्मक शिक्षण के द्वारा सहयोग प्रदान किया जाए ताकि वे अपनी नवीन प्रोन्नत कक्षा के पाठ्यक्रम के साथ स्वयं को समायोजित कर सकें तथा माध्यमिक स्तरीय अपेक्षित अधिगम स्तर को प्राप्त कर सकें।

अधिगम स्तर आंकलन को विस्तार से समझने के लिए हमें इसकी प्रक्रिया के चरणों को समझना होगा। इस प्रक्रिया के प्रथम चरण में राज्य संदर्भ समूह का गठन किया जाता है। राज्य संदर्भ समूह में एस.सी.ई.आर.टी, राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान के अधिकारी/विशेषज्ञ, सीनेट और डायट में कार्यरत शिक्षक–प्रशिक्षकों के अतिरिक्त विषय अध्यापकों को भी सम्मिलित किया जाता है। राज्य संदर्भ समूह के सदस्यों द्वारा कक्षा 8 और कक्षा 9 की उभयनिष्ठ विषयवस्तु तथा दक्षताओं की पहचान कर विज्ञान, गणित, अंग्रेजी तथा हिन्दी से संबंधित संबोधों और उपसंबोधों पर आधारित प्रश्नपत्रों का निर्माण किया जाता है। इन्हें पूर्व आंकलन प्रपत्र कहा जाता है। अप्रैल माह में शैक्षिक सत्र प्रारम्भ होने से पहले इन आकलन प्रपत्रों के आधार पर परीक्षा का आयोजन किया जाता है। यह परीक्षा मैत्रीपूर्ण वातावरण में सम्पन्न की जाती है जिससे बच्चों को परीक्षा का मनोवैज्ञानिक भय न रहे। इस परीक्षा के आधार पर विद्यार्थियों के अधिगम स्तर का आकलन, संबोध और उपसंबोधों पर आधारित प्रश्नों के दिए उत्तरों के आधार पर किया जाता है। अधिगम स्तर आकलन के माध्यम से कक्षा 9 के प्रत्येक विद्यार्थी का चाइल्ड प्रोफाइल तैयार किया जाता है। चाइल्ड प्रोफाइल को इस उदाहरण से समझा जा सकता है–

चाइल्ड प्रोफाइल

विद्यार्थी का नाम – विषय – विज्ञान पूर्व विद्यालय का नाम–

क्रम सं	संबोध	उप संबोध	प्रश्न संख्या	A	PA	NA	अभ्युक्ति
1	कोशिका एवं जीवों का संसार	सजीव एवं निर्जीव अवधारणा	1 2				
		सूक्ष्म जीवों के प्रकार	3				
		कोशिका	4				
		कोशिका	5				
		विभिन्न प्रकार के जीन	6				

जिन बच्चों ने जिस उपसंबोध से संबंधित प्रश्न का पूर्ण रूप से सही उत्तर दिया है, उन्हें A (Achieved), जिन्होंने आंशिक रूप से सही उत्तर दिया है उन्हें PA(Partially achieved) तथा

जो विद्यार्थी जिस प्रश्न का सही उत्तर नहीं लिख पाए उन्हें NA(Not achieved) के अंतर्गत रखकर उनके संबोध और उपसंबोधों में अधिगम की स्थिति ज्ञात की जाती है। उस संबोध के सम्मुख लिखे A, PA तथा NA के नीचे अधिगम की स्थिति के अनुसार सही का निशान लगाया जाता है। इस प्रकार चाइल्ड प्रोफाइल से हमें विषय से संबंधित संबोध तथा उपसंबोधों में विद्यार्थी की अधिगम की स्थिति का पता चल जाता है।

कक्षा के सभी बच्चों के चाइल्ड प्रोफाइल के आधार पर अधिगम स्तर का कक्षावार विश्लेषण किया जाता है। कक्षावार विश्लेषण इस प्रपत्र पर निम्नवत किया जाता है –

विषय– विद्यालय– संबोध/उपसंबोध–

क्रम सं.	विद्यार्थी का नाम	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
1	दीपा	PA	NA	A	PA	A	A	NA	PA	A	PA
2	मोहन	NA	PA	NA	NA	NA	PA	NA	PA	A	NA

इस प्रपत्र पर प्रत्येक विषय अध्यापक कक्षा के समस्त विद्यार्थियों के संप्राप्ति स्तर को अंकित करते हैं। इस आधार पर कक्षा की संकलित संबोध संप्राप्ति आख्या तैयार की जाती है। कक्षावार विश्लेषण में यह देखा जाता है कि किस संबोध में विद्यार्थियों ने NA (Not Achieved) तथा PA (Partially achieved) प्राप्त किया? इन संबोधों पर शिक्षकों को सुधारात्मक शिक्षण का सुझाव दिया जाता है। उदाहरण के लिए कक्षा 9 के अधिकांश बच्चों ने यदि बीजीय व्यंजक संबोध के अंतर्गत एक चर वाले रैखिक समीकरण में NA तथा PA प्राप्त किया है तो यह शिक्षकों के लिए सुधारात्मक शिक्षण हेतु चिह्नित संबोध के अंतर्गत रखा जाएगा। NA तथा PA वाले संबोधो पर सुधारात्मक शिक्षण माह जुलाई में पूरा किया जाता है। इस हेतु प्रति विषय 50 वादन निर्धारित किए गए हैं।

सुधारात्मक शिक्षण में शिक्षक द्वारा चिह्नित संबोधों पर नवाचारी गतिविधियों का संचालन किया जाता है। इन गतिविधियों में चर्चा–परिचर्चा, पावर पॉइंट प्रस्तुतीकरण और अन्य सूचना संप्रेषण तकनीकी आधारित गतिविधियॉं, शिक्षण–अधिगम सामग्री का प्रयोग, मॉडल, प्रोजेक्ट, प्रयोगशाला आधारित गतिविधियों को विशेष महत्व दिया जाता है। 50 वादनों के सुधारात्मक शिक्षण के बाद पश्चपोषण आकलन प्रपत्रों के आधार पर शिक्षकों द्वारा विद्यार्थियों की मैत्रीपूर्ण वातावरण में पुनः परीक्षा का आयोजन किया जाता है। इसके बाद पश्च आकलन प्रपत्रों के विश्लेषण के आधार पर पुनः चाइल्ड प्रोफाइल तैयार किया जाता है। पूर्व और पश्च आकलन प्रपत्रों के विश्लेषण से जिन संबोधों में विद्यार्थियों द्वारा PA और NA प्राप्त किया जाता है, उनके लिए शिक्षक द्वारा अतिरिक्त समय में सुधारात्मक शिक्षण सतत रुप से जारी रखा जाता है।

अधिगम स्तर आकलन में शिक्षकों की भूमिका

अधिगम स्तर आकलन शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया का अनिवार्य और अभिन्न अंग है। शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया शिक्षक के अकादमिक नेतृत्व में ही संपन्न होती है। अतः इसमें शिक्षक की केन्द्रीय भूमिका होती है। पूर्व आंकलन प्रपत्रों के आधार पर प्रत्येक विद्यार्थी का चाइल्ड प्रोफाइल तैयार कर कक्षा का संबोधवार विश्लेषण करने के उपरांत PA तथा NA संबंधित संबोधों पर आधारित सुधारात्मक शिक्षण की कार्ययोजना शिक्षक द्वारा ही तैयार की जाती है। सुधारात्मक शिक्षण के अंतर्गत नवाचारी गतिविधियों का संचालन शिक्षक द्वारा ही किया जाता है। कक्षा में सभी विद्यार्थियों का अधिगम स्तर एक जैसा नहीं होता है। कुछ विद्यार्थी अपेक्षित दक्षताओं को पहले से ही प्राप्त किए हुए होते हैं। सुधारात्मक शिक्षण में ऐसे विद्यार्थियों का सहयोग पीयर ग्रुप लर्निंग के रूप में किया जाता है। शिक्षकों द्वारा समय–समय पर सुधारात्मक शिक्षण में अपनाई गई नवाचारी गतिविधियों का स्वमूल्यांकन करना चाहिए ताकि जरूरत पड़ने पर वे अपनी शिक्षण योग्यता में परिवर्तन ला सकें।

सुधारात्मक शिक्षण के बाद शिक्षकों द्वारा पश्च आकलन प्रपत्रों का निर्माण किया जाता है। पश्च आकलन प्रपत्रों के विश्लेषण से शिक्षक द्वारा पुनः चाइल्ड प्रोफाइल तैयार किया जाता है। पूर्व और पश्च आकलन प्रपत्रों से प्राप्त अधिगम स्तर के तुलनात्मक अध्ययन में यदि यह पाया जाता है कि कुछ विद्यार्थी अभी भी अपेक्षित दक्षताओं को प्राप्त नहीं कर पाए हैं तो शिक्षक द्वारा अतिरिक्त समय में उनके लिए सुधारात्मक शिक्षण जारी रखा जाता है। सुधारामक शिक्षण में विषय अध्यापक के अतिरिक्त अन्य अध्यापक भी सहयोग प्रदान करते हैं।

अधिगम स्तर आकलन में प्रधानाचार्य की भूमिका

अधिगम स्तर आकलन के प्रत्येक चरण में प्रधानाचार्य की भूमिका शैक्षिक नेतृत्व देने और नियंत्रक की होती है। प्रधानाचार्य द्वारा विषय अध्यापकों से पूर्व और पश्च आकलन प्रपत्रों से प्राप्त अधिगम स्तर को निम्नलिखित प्रारूप में तैयार किया जाता है–

क्रम सं0	विषय	कुल मूल्यांकित विद्यार्थी	संबोध में PA तथा NA प्राप्त विद्यार्थी							
			संबोध 1	संबोध 2	संबोध 3	संबोध 4	संबोध 5	संबोध 6	संबोध 7	संबोध 8 आदि
1	हिन्दी									
2	अंग्रेजी									
3	गणित									
4	विज्ञान									

अधिगम स्तर आकलन में अन्य अधिकारियों की भूमिका

अधिगम स्तर आकलन का नियमित अनुश्रवण राज्य स्तर से विकास खण्ड अधिकारी तक किया जाता है। अनुश्रवण के समय अधिकारियों द्वारा ऐसे संबोधों का संज्ञान लिया जाता है

जिनमें शिक्षार्थियों को सुधारात्मक शिक्षण की आवश्यकता होती है। ऐसे संबोधों को एस.सी.ई.आर.टी. को प्रेषित किया जाता है। एस.सी.ई.आर.टी. द्वारा इन संबोधों को प्रशिक्षण आवश्यकता विश्लेषण में प्रयोग कर प्रशिक्षण कार्ययोजना तैयार की जाती है।

अधिगम स्तर आकलन में अभिभावकों की भूमिका

अधिगम स्तर आकलन के प्रत्येक चरण में विद्यार्थियों की उपस्थिति आवश्यक है। इसलिए शिक्षकों को अभिभावकों से निरन्तर सम्पर्क बनाए रखना चाहिए। इसके लिए आवश्यक है कि विद्यालय में आयोजित बैठकों में अभिभावकों को अनिवार्य रूप से प्रतिभाग करने के लिए प्रेरित किया जाए। प्रधानाचार्य और शिक्षकों द्वारा अभिभावकों को अपने पाल्यों की प्रगति के विषय में विद्यालय से संवादात्मक सहयोग प्रदान करने के लिए भी लगातार प्रेरित करते रहना चाहिए।

अधिगम स्तर आकलन का महत्व

अधिगम स्तर आकलन की प्रकिया में शिक्षकों को अपने विषयों से संबंधित ऐसे संबोधों को पहचानने में सहायता मिलती है जिनमें विद्यार्थियों की संप्राप्ति का स्तर न्यून होता है। अतः ऐसे संबोधों के शिक्षण हेतु शिक्षक को नवाचारी गतिविधियों के उपयोग का अवसर मिलता है ताकि इन संबोधों में शिक्षार्थियों की संप्राप्ति का स्तर बढ़ाया जा सके। अधिगम स्तर आकलन के माध्यम से कठिन संबोधों के प्रशिक्षण हेतु कार्ययोजना तैयार करने में सहायता मिलती है। यह शिक्षकों को स्वमूल्यांकन का अवसर भी प्रदान करता है।

जब आप खुश हों तब गहराई से अपने हदय में देखिए। आप पायेंगे कि जिस चीज ने आपको दुखी किया था वे ही आपको खुशी दे रही हैं। जब आप दुखी हों, तब फिर अपने हदय में झांकिए और आप देखेंगे की असल में आप जिसके लिए रो रहे हैं वही आपकी खुशी रहा है।

– खलील जिब्रान

शास्त्र ही महिलाओं का शस्त्र है

– रत्ना गुप्ता

'एम्पावर' का शाब्दिक अर्थ है योग्यता प्रदान करना या सशक्त बनाना। ऑक्सफोर्ड अमेरिकन शब्दकोश के अनुसार 'किसी को इतनी शक्ति और विश्वास प्रदान करना कि वह अधिकार प्राप्त करके अपने जीवन को नियंत्रित कर सके सशक्तीकरण है। इस प्रकार महिला सशक्तीकरण का अर्थ है महिलाओं को योग्यता अर्थात शिक्षा प्रदान करके उन्हें शक्तिशाली बनाकर उनमें विश्वास जाग्रत करना जिससे कि वे अपने अधिकार प्राप्त कर सकें और जीवन को नियंत्रित कर सकें अर्थात अपने जीवन से संबंधित निर्णय वे स्वयं ले सकें।'

महिला सशक्तीकरण की स्थिति का सम्यक विवेचन करने के लिए आवश्यक है कि समाज में उनकी बदलती स्थिति और उसके लिए उत्तरदायी कारकों का गहण विश्लेषण किया जाए। इस संदर्भ में सबसे पहले प्राचीन भारतीय नारी की स्थिति को देखने और समझने की जरुरत होगी ताकि 'क्या वह सशक्त थी?' इस प्रश्न का उत्तर सुनिश्चित किया जा सके।

प्राचीन भारत के उपलब्ध साक्ष्यों से यह ज्ञात होता है कि तब महिलाओं की स्थिति बड़ी सशक्त थी। उसे पुरूषों से भी अधिक उच्च स्थान प्राप्त था। मनुस्मृति में कहा गया है कि 'महिलायें पूज्यनीय हैं, वे घर का भाग्य हैं, वे परिवार में शान्ति लाती हैं और उन्हें धार्मिक जीवन का मुख्य अंग माना गया है। मनुस्मृति में यहां तक कहा गया है कि स्वर्ग भी महिलाओं के नियन्त्रण में है। जिन घरों में महिलाओं की पूजा होती है वहॉ देवता भी निवास करते हैं।''

उस दौर में नारी को भी पुरूष के समान ही धार्मिक अधिकार प्राप्त थे। ऋगवेद संहिता में वर्णित है 'यदि पति उपस्थित नहीं है तो पत्नी को अग्निहोत्र करना चाहिए। संध्यावन्दना करनी चाहिए, और सभी धार्मिक अनुष्ठान करने चाहिए, उसे अग्निहोत्र का पूर्ण अधिकार है।''

इसी प्रकार अन्यत्र वर्णित है कि 'मैं (ऋषि) ये मन्त्र और इनकी समस्त शक्तियॉ तुम्हे पुरूषों के समान ही प्रदान करता हूं।'' पतिव्रता स्त्री को अग्नि से भी अधिक पवित्र माना जाता था। महाकाव्यों में ऐसे उदाहरण मिलते हैं जो यह दर्शाते हैं कि उनमें शासन और शासक को नष्ट करने का सामर्थ्य था। बाल्मीकि कृत रामायण सीता हरण को रावण के विनाश का कारण और व्यास कृत महाभारत द्रौपदी के चीर हरण को कौरवों के विनाश का कारण बताते

हैं। इतना ही नहीं महिला सामाजिक रूप से भी बड़ी सशक्त थी। उसे स्वयंवर के माध्यम से विवाह के लिये स्वयं अपने पति का चुनाव करने की स्वतन्त्रता थी। रामायण और महाभारत में स्वयंवर के उदाहरण मिलते हैं। लेकिन मुगलकाल में नारी की स्थिति सोचनीय हो गयी। पर्दाप्रथा, बाल विवाह, सती प्रथा, कन्या हत्या, और बहु पत्नी प्रथा जैसी सामाजिक बुराइयों ने महिलाओं की स्थिति समाज में दयनीय कर दी। पर्दाप्रथा और बाल विवाह ने उसे शिक्षा और सामाजिक जीवन से निर्वासित कर दिया। ब्रिटिश काल में ईश्वरचन्द्र विद्यासागर और राजा राममोहन राय के प्रयासों के परिणामस्वरूप सती प्रथा, बाल विवाह जैसी बुराइयॉं दूर हुई और विधवा पुर्नविवाह शुरू हुआ लेकिन फिर भी स्त्रियों की दशा में अपेक्षित सुधार नहीं हो सका।

स्वतन्त्र भारत में महिलाओं की दशा सुधारने के लिये लगातार प्रयास होते रहे हैं। आज शिक्षा, खेल और विज्ञान से लेकर अंतरिक्ष अनुसंधान में भारतीय महिलाएं अपना लोहा मनवा रही हैं। महिला सशक्तीकरण के लिए सरकार विभिन्न योजनाएं भी चला रही है। इसके बावजूद भारतीय महिलाओं को अपने जीवन के अहम फैसले लेने का अधिकार नहीं है। आज से कई वर्ष पहले अमेरिका की यूनिवर्सिटी आफ मेरीलैंड और देश की नेशनल काउंसिल ऑफ अप्लाइड इकनॉमिक रिसर्च ने संयुक्त रूप से इण्डियन हयूमन डेवलपमेन्ट सर्वे 2012 जारी किया था जिसके मुताबिक केवल 5 फीसदी भारतीय महिलाओं को अपना जीवन साथी चुनने का हक उपलब्ध था। इस सर्वेक्षण में ग्रामीण एवं शहरी, 15 से 80 वर्ष की 34000 महिलाओं को सम्मिलित किया गया था। सर्वेक्षण में यह भी दर्शाया गया है कि 80 प्रतिशत महिलाओं को स्वास्थ्य केन्द्र जाने के लिये अनुमति लेनी पड़ती है। 58 प्रतिशत महिलाएं अपनी मर्जी से राशन की दुकान नहीं जा सकती।

इसका कारण है शैक्षिक लिंग भेद जो स्वतन्त्रता प्राप्ति के 70 वर्ष बाद भी जीवन के अन्य क्षेत्रों के साथ–साथ शिक्षा में भी हावी है। सन् 2011 की जनगणना रिपोर्ट बताती है कि देश में महिलाओं की साक्षरता दर 64.6 प्रतिशत और पुरूषों का 80.9 प्रतिशत है। वहीं डिस्ट्रिक्ट इन्फार्मेशन सिस्टम फॉर एजुकेशन (2011–12) की रिपोर्ट बताती है कि प्राथमिक स्तर पर लड़कियों का नामांकन 48.35 प्रतिशत और उच्च स्तर पर 17 प्रतिशत जबकि लड़कों का 20 प्रतिशत है। आल इण्डिया सर्वे आन हायर एजुकेशन (AISHE) 2010–11 के अनुसार स्नातक एवं परास्नातक पाठ्यक्रमों में लड़के एवं लडकियों का नामांकन क्रमशः 45 प्रतिशत एवं 55 प्रतिशत, जबकि पी.एच.डी. में 62 प्रतिशत एवं 38 प्रतिशत है। आखिर इस असमानता का कारण क्या है?

हमारी संस्कृति में विवाह को अनिवार्य माना जाता है। विवाह न करने पर महिला को सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा जाता। कई इलाकों में तो आज भी बाल–विवाह प्रचलित है।

इसके अतिरिक्त हमारे यहां विवाह की आयु 18 वर्ष है। यह वह उम्र है जब तक शिक्षा पूरी नहीं हो पाती। इस प्रकार विवाह की अनिवार्यता और कम उम्र में विवाह महिलाओं को शिक्षा के अधिकार से वंचित कर देता है। पापुलेशन फाउन्डेशन ऑफ इण्डिया की निदेशक मुथेजा के अनुसार, ''विवाह पुरूषों की अपेक्षा महिलाओं के भविष्य को अधिक सीमित कर देता है।''

इसके अतिरिक्त हमारे समाज में दहेज प्रथा अनेक सरकारी प्रयासों के बावजूद, आज भी प्रचलित है। दहेज के बोझ की वजह से माता–पिता लड़कियों की पढ़ाई पर अधिक खर्च नहीं करना चाहते क्योंकि वे जानते हैं कि उनकी लड़की चाहे कितनी भी सुशिक्षित क्यों न हो, सुयोग्य वर के लिये उन्हें विवाह पर विपुल धन खर्च करना ही होगा।

इसके अतिरिक्त हमारा समाज पुरूष सत्तात्मक समाज है। हमारे यहां महिलाओं का प्रथम दायित्व गृह–कार्य और बच्चों की परवरिश समझी जाती है। नौकरी करना आवश्यक नहीं समझा जाता। यह परम्परागत सोच भी महिलाओं की शिक्षा में बाधक है।

साथ ही साथ विद्यालयों का पहुंच से बाहर होना, बिजली का न होना, आवागमन की सुविधाओं का अभाव, सभी विद्यालयों में महिला प्रसाधन का न होना और महिला शिक्षकों की सहभागिता अनुपात से कम होना भी महिलाओं के अशिक्षित रह जाने के प्रमुख कारण हैं। इन्फार्मेशन सिस्टम फार एजुकेशन (2011–12) की रिपोर्ट के अनुसार देश के 72.16 प्रतिशत विद्यालयों में महिला प्रसाधन है और प्राथमिक स्तर पर यह प्रतिशत मात्र 65.4 है। प्राथमिक स्तर पर महिला शिक्षकों का प्रतिशत 46.27 है तथा आल इण्डिया सर्वे ऑफ हायर एजुकेशन के अनुसार उच्च स्तर पर महिला शिक्षकों का प्रतिशत 59 है। बहुत से अभिभावक पुरूष शिक्षकों से अपनी बेटियों को पढ़वाना पसन्द नहीं करते तथा बहुत सी लड़कियां स्वयं भी पुरूष शिक्षकों से पढ़ने में संकोच करती हैं।

इसके अतिरिक्त महिला उतपीड़न, निम्न स्वास्थ्य स्तर, जागरूकता की कमी आदि भी महिलाओं की शिक्षा में अवरोध उत्पन्न करती हैं।

सवाल उठता है कि आखिर इन चुनौतियों से पार कैसे पाया जाए?

वैश्विक अनुभव यह बताते हैं कि इन चुनौतियों पर विजय पाने के लिए विद्यालय को महिलाओं की पहुंच में लाना होगा, महिला शिक्षिकाओं की नियुक्ति करनी होगी, विवाह की आयु बढ़ानी होगी, विद्यालय में प्रसाधन सुविधाओं को सुनिश्चित करना होगा, अभिभावकों और माता पिता को लड़कियों के प्रति संवेदनशील बनाना होगा, साथ ही साथ विद्यालय में महिला जागरूकता कार्यक्रम, ईंच वन टीच वन लेडी कार्यक्रम, महान महिलाओं के जन्म दिवसों का

आयोजन, महिला प्रधान नाटकों का आयोजन और आत्म रक्षा कार्यक्रम जैसी पाठ्यसहगामी क्रियाओं का आयोजन करना होगा। इसके साथ पाठ्यक्रम में विकसित देशों की महिलाएं एवं उनके अधिकार तथा कानून, महिला सशक्तीकरण का महत्व, महान महिलाओं की जीवनियां जैसी विषयवस्तु सम्मिलित करके हम भारतीय महिलाओं को सशक्त करने का प्रयास कर सकते हैं। लेकिन इन सबके पहले हमें अपनी पाठ्यपुस्तकों को सुधारना होगा जो महिलाओं को कमजोर तरीके से चित्रित करती हैं तथा शिक्षकों को लड़कियों के प्रति संवेदनशील बनाना होगा जो अकसर 'जेन्डर वायस्ड' भाषा का प्रयोग करते हैं। जब तक शिक्षक 'जेन्डर सेंसेटिव' नहीं होंगे तब तक छात्रों का 'जेन्डर सेंसेटिव' होना संभव नहीं हो सकेगा। इसके लिए आवश्यक है कि बड़े पैमाने पर 'जेन्डर सेन्सेटिव टीचर ट्रेनिंग प्रोग्राम' संचालित की जाए।

राम मनोहर लोहिया सभी अन्यायों के विरुद्ध एक साथ जेहाद बोलने के पक्षपाती थे। उन्होंने एक साथ सात क्रांतियों यथा नर–नारी की समानता के लिए; चमड़ी के रंग पर रची राजकीय, आर्थिक और दिमागी असमानता के खिलाफ; संस्कारगत, जन्मजात जातिप्रथा के खिलाफ और पिछड़ों को विशेष अवसर के लिए; परदेसी गुलामी के खिलाफ और स्वतन्त्रता तथा विश्व लोक राज के लिए; निजी पूंजी की विषमताओं के खिलाफ और आर्थिक समानता के लिए तथा योजना द्वारा पैदावार बढ़ाने के लिए ; निजी जीवन में अन्यायी हस्तक्षेप के खिलाफ और लोकतंत्री पद्धति के लिए तथा अस्त्र–शस्त्र के खिलाफ और सत्याग्रह के लिए संघर्ष का आहवान किया था।

इन सात क्रांतियों के संबंध में लोहिया ने कहा था – मोटे तौर से ये हैं वे सात क्रांतियां जो संसार में एक साथ चल रही हैं। अपने देश में भी उनको एक साथ चलाने की कोशिश करनी चाहिए। समाज के जितने लोगों को भी क्रांति समझ में आयी हो उनके पीछे पड़ जाना चाहिए और बढ़ाना चाहिए। बढ़ाते – बढ़ाते शायद ऐसा संहयोग हो जाए कि आज का इंसान सब नाइन्साफियों के खिलाफ लड़ता–जूझता ऐसे समाज और ऐसी दुनियां को बना पाये कि जिसमें आंतरिक शांति और बाहरी या भौतिक शांति से भरा–पूरा समाज बन पाये।'

– राम मनोहर लोहिया

शुद्धवाचन में उच्चारण शिक्षण की भूमिका

— वीरेन्द्र जैन

किसी भी भाषा शिक्षण व सीखने संबंधित चार कौशल होते हैं— सुनना, बोलना, पढ़ना और लिखना। जहां सुनना और बोलना भाषा के भाषण पक्ष से संबंधित है वहीं पढ़ना और लिखना लेखन पक्ष से। हमारी भाषा कितनी परिशुद्ध व परिष्कृत होगी, यह इन चारों कौशलों के समुचित विकास पर निर्भर है। उच्चारण कौशल का अभ्यास कराते समय शिक्षक व छात्र अनेक समस्याओं का सामना करते हैं। ऐसे में कौशल विकास की प्रक्रिया में भाषा शिक्षक की भूमिका कैसी हो? इसका विवेचन आवश्यक है।

भाषा विचारों, भावों, मन के उठने वाली विचार तरंगों को अभिव्यक्त करने का माध्यम या साधन है। बचपन में बच्चे अपनी मॉ की बोली सुनकर उसे बोलने का प्रयास करते हैं, यही बोली स्थान और परिवेश के साथ वैधानिक रूप धारण करते ही भाषा का रूप ग्रहण कर लेती है और इसे मातृभाषा के नाम के जाना जाता है। भाषा ही वक्ता और श्रोता को आपस में जोड़ने का कार्य करती है। ब्राह्मण ग्रन्थों में कहा गया है— 'लोकव्यवहारे प्रचलित वागेव भाषा शब्देन व्यहृता'। तात्पर्य यह कि लोकव्यवहार में प्रचलित वाग् शब्द ही भाषा के रूप में प्रयोग होता है। वैसे तो भाषा के मुख्यतः दो रूप होते हैं, 1. भाषयिक 2. लिखित। वास्तव में अपने पूर्व रूप के (भाषतृेश्नया इति भाषा) कारण ही भाषा का नाम सार्थक होता है। भाषा प्रयोग के लिए शब्द भण्डार, शब्दों का वाक्यों में उचित निवेश और परिशुद्ध प्रयोग तथा शुद्ध उच्चारण की प्रमुख आवश्यकता होती है। इनमें से एक में भी कमी 'भाषा प्रयोग' को दूषित व लज्जित कर देती है।

हम सभी जानते हैं कि भाषा के चार कौशल होते हैं यथा — सुनना, बोलना, पढ़ना और लिखना। लेकिन प्रश्न यह उठता है कि भाषा के ये कौशल 'उच्चारण' से कैसे संबंधित हैं? इसे इस तरह प्रतिपादित किया जा सकता है, कि भाषा के दो कौशल 'सुनना' और 'बोलना' भाषा के प्रथम रूप अर्थात् भाषयिक रूप से संबंधित हैं तथा पठन अथवा लेखन दूसरे अर्थात् लिखित रूप से संबंधित हैं। उच्चारण का सीधा संबंध सुनना और बोलना इन दो कौशलों से है। भाषा की एक विशेषता है कि हम जैसा उच्चारण सुनते हैं वैसा ही उच्चारण करने के लिए प्रेरित होते हैं। यदि शुद्ध उच्चारण सुनते हैं तो वैसे ही उच्चारण करते हैं। अशुद्ध उच्चारण सुनकर अशुद्ध उच्चारण करते हैं। इसलिए एक योग्य शिक्षक को यह ध्यान रखने की आवश्यकता होती है कि उसका उच्चारण शुद्ध एवं अनुकरणीय बन सकें जिससे

कि विद्यार्थी शुद्ध उच्चारण सुने और सीखें। यह बात शिक्षक को कक्षा में भाषा प्रयोग करते समय, ध्यान में रखनी चाहिए। इस विषय में याज्ञवल्क्य शिक्षा में कहा गया है–

व्याघ्री यथा हरेत्पुत्रान् दंश्द्रध्यां न च पीडयेत्।
भीता पतनभेदाभ्यां तद्वर्णानप्रयोजयेत्।।[1]

तात्पर्य जिस प्रकार बाघिन अपने बच्चों को मुंह में लेकर चलती फिरती है, पर बच्चे को न तो दांत चुभते हैं और न ही मुंह से कभी वह गिरता है। ठीक वैसे ही शब्दोच्चारण भी करने चाहिए। न तो अक्षर को चबा–चबाकर बोले जिससे शब्द मुंह में ही रह जायें और न ही शीघ्र बोले जिससे शब्द मुख से ही गिर जायें। प्रयास करनी चाहिए कि सभी शब्द एक दूसरे से अलग अलग सुनाई दें।

अतः एक शिक्षक को पढ़ाते समय, आदर्श वाचन करते समय, अनुकरण वाचन सुनते समय और कक्षा–कक्ष के अलावा सामान्य बातचीत में भी ध्यान रखनी चाहिए कि उसका उच्चारण अतीव शुद्ध रहे जिससे कि शिक्षार्थियों में भाषा का श्रवण कौशल अनायास ही विकसित करने की योग्यता ठीक से पनप सके। यदि ऐसा नहीं होता है तो विद्यार्थी शिक्षक के उच्चारण से भी अशुद्ध उच्चारण के आदी हो सकते हैं।

अशुद्ध उच्चारण के और भी अनेक रूप और कारण हो सकते हैं जैसे विद्यार्थियों में शारीरिक दोष का होना। इसके लिए 'नाक' जिव्हा अथवा 'मुख' के किसी[1] अवयव में विकार का पाया जा सकता है। इन दोषों के निदान के लिए शिक्षक अथवा माता–पिता चिकित्सा विशेषज्ञ की सहायता ले सकते हैं।

इसी प्रकार भाषा विकास में ध्वनियों के शुद्ध उच्चारण के ज्ञान का अभाव भी उच्चारण दोष का कारण बनता है जैसे कभी–कभी हम 'विद्यालय' को 'विधालय' या 'विद्धालय' और 'क्षमा' को 'शमा' या 'छमा' तथा 'कक्षा' को 'कच्छा' या कछ्या' कहकर उच्चारित करते हैं। अशुद्ध उच्चारण का एक और भी कारण है। स्थानीय बोलियों और स्थानीय भाषा का उच्चारण पर प्रभाव। जैसे मारवाड़ और बागड़ के लोग स को च और च को स उच्चरित करते हैं तो पंजाब और हरियाणा के हलन्त को अ जैसे 'शब्द' को 'शबद', 'तन्त्र' को 'तन्तर' और 'मंत्र' को 'मन्तर', तमिल लोग थ के स्थान पर ***त*** जैसे मंजुनात, बंगाल के लोग ओष्ठ को गोल कर क, ख को को, खो आदि उच्चरित करते हैं जो अनुचित है।

विदेशी ध्वनियां भी हमारे उच्चारण में कठिनाई उत्पन्न करती हैं जैसे 'स्टेशन' को इस्टेशन या 'सटेशन' और 'स्कूल' को इस्कूल 'सकूल' कहकर उच्चारित करना। हिंदी भाषा की कुछ ध्वनियां बहुत मिलती–जुलती हैं। कभी–कभी छात्र इन ध्वनियों के उच्चारण के अंतर

को समझ नहीं पाते और अशुद्ध उच्चारण करते हैं जैसे 'श' को 'स' और 'स' को 'श' बोलना। 'श' को 'स' बोलने के कुछ उदाहरण हैं– 'शरीर' के स्थान पर **'सरीर'** 'शीतल' के स्थान पर '**सीतल**' 'शोभा' के स्थान पर **'सोभा'** इसी प्रकार 'स' को 'श' बोलने के कुछ उदाहरण हैं 'स्वयं' के स्थान पर '**शवयं**' 'संपूर्ण' के स्थान पर **'शंपूर्ण'** 'सोर' के स्थान पर **'शोर'**। इसी तरह 'व' एवं 'ब' की ध्वनियों में इसी प्रकार भ्रम हो जाता है जैसे 'विद्या' के स्थान पर 'बिद्या' विकार के स्थान पर बिकार, 'विस्तार' के स्थान पर 'बिस्तार' तथा 'वासना' के स्थान पर 'बासना' आदि। विदेशी भाषा की ध्वनियॉ भी उच्चारण पर प्रभाव डालती हैं। उर्दू, फारसी आदि भाषाओं के जो शब्द हिंदी भाषा में स्वीकृत हो चुके हैं, उनका हिंदी उच्चारण निर्धरित हो चुका है परंतु विद्यार्थी विदेशी भाषा की ध्वनियों के उच्चारण में त्रुटि कर जाते हैं। विद्यार्थी प्रायः 'जरूरी' को 'ज़रूरी' 'इज़ाजत को 'इजाजत' कह देते हैं।

आज हिंदी भाषा में ये उच्चारण मान्यता प्राप्त हैं। यदि विद्यार्थी इन शब्दों के मूलरूप का उच्चारण करें तो उसे अशुद्ध उच्चारण नहीं कहा जा सकता लेकिन देखने में प्रायः यह आया है कि कई बार अशुद्ध उच्चारण से अर्थ का अनर्थ हो जाता है, उदाहरणार्थ, निम्नलिखित दो शब्द का उच्चारण इस तरह से सुना जा सकता है

1. 'जरा' – 'ज़रा'
2. 'ख़ाना' – 'ख़ाना'

यहॉ पर 'जरा' शब्द का अर्थ है बुढ़ापा और 'ज़रा' शब्द का अर्थ है थोड़ा। इसी प्रकार 'ख़ाना' शब्द का अर्थ है अलमारी का हिस्सा अर्थात् शेल्फ और 'खाना' का अर्थ है भोजन। यदि यह कहा जाए कि 'ख़ाने' में पुस्तक रखी है तो इसका अर्थ हो जाएगा कि भोजन में पुस्तक रखी है। उपर्युक्त शब्दों के अलग–अलग उच्चारण की बात यहां की गई, लेकिन क्या शब्दों के सही उच्चारण से पूरे वाक्य का उच्चारण शुद्ध हो सकता है? शायद ऐसा संभव नहीं है।

शब्द का उच्चारण शुद्ध होते हुए बलाघात एवं अनुतान के उचित पालन के अभाव से अर्थ में अंतर आ सकता है। इस तथ्य को और स्पष्ट करने के लिए यहां एक उदाहरण के द्वारा समझा जा सकता है। मैं **कल** बाजार जाऊॅगा। इसका अर्थ तो यह हुआ कि मैं कल ही **बाजार जाएँगा**, कभी और नहीं। मैं कल बाजार जाऊॅगा, जाऐंगे और कहीं नहीं। उपर्युक्त उदाहरण के आधार पर यह प्रतीत होता है कि वाक्य में अलग–अलग शब्दों पर बल देने से अर्थ बदल जाता है।

अनुतान का उच्चारण पर किस तरह का प्रभाव पड़ता है इसे भी एक उदाहरण से समझा जा सकता है। **'तुमने पुस्तक पढ़ ली'**। इस वाक्य को दो प्रकार से उच्चारित किया जा

वाचन संबंधी दोष	कारण	उपचार
1. शब्दों को ठीक से न पहचान पाना।	1. दृष्टि दोष 2. वाचन संबंधी सामग्री का अभाव 3. पाठ्य सामग्री का कठिन होना। 4. दोषपूर्ण प्रशिक्षण	क. उपनेत्र (चश्मा) तथा अन्य उपचार द्वारा दृष्टिदोष का निवारण करना। ख. सरल व आकर्षक पाठ्य सामग्री। ग. कठिन शब्दों का बारबार अभ्यास कराना।
2 नेत्रों की गति का ठीक ठीक न होना।	1. दृष्टि दोष 2. स्नायु संबंधी दोष। 3. शब्द की ओर संकेत करके पढना।	क. दृष्टि तथा स्नायु संबंधी दोषों को दूर करना। ख. शब्द की ओर संकेत करके पढ़ने की आदत को तोड़ना।
3. अशुद्व उच्चारण	1.वाणी संबंधी दोष 2. दृष्टि संबंधी दोष 3. पढते समय ध्वन्यात्मक चिन्हों को ध्यान में रखते हुए नहीं पढना। 4. कठिन पाठ्य सामग्री	क. शारीरिक दोषों को दूर करना। ख. शब्दों की ध्वनियों का अभ्यास करना ग. शब्द भंडार की वृद्धि करना।
4. वाचन काल में अर्थ का ज्ञान न होना।	1. शब्द भंडार की कमी 2. अनुभव व अभ्यास का अभाव	क. बालकों को उपसर्ग, प्रत्यय, मूलशब्द, पर्यायवाची, विलोम शब्द इत्यादि का ज्ञान कराना। ख. शब्द कोष का ज्ञान सिखाना। ग. शब्द भंडार बढाने के लिए चित्रादि का प्रदर्शन।
5. एक एक शब्द करके पढना।	1. नेत्रों की गति का ठीक न होना। 2. पाठ्य सामग्री का कठिन होना। 3. अभ्सास का अभाव होना। 4. ध्वन्यात्मक विधियों का बहुत प्रयोग।	क. नेत्रों की गति को ठीक करना। ख. सस्वर वाचन कम कराना। ग. सरल एवं रोचक पाठ्य सामग्री का प्रयोग। घ. वाचन के लिए अवधि निश्चित करना।

सकता है। **'तुमने पुस्तक पढ़ ली?** इस वाक्य के उच्चारण से ज्ञात होता है कि एक **प्रश्न** पूछा जा रहा है। 'तुमने पुस्तक पढ़ ली! इस वाक्य से लगता है कि वक्ता को इस बात का विश्वास ही नहीं हो रहा है कि पुस्तक पढ़ ली गई है। इन उदाहरणों के द्वारा यह पता चलता

है कि अनुतान से अर्थ किस प्रकार बदलता रहता है। उपर्युक्त तथ्यों और उदाहरणों के आधार पर कहा जा सकता है कि विद्यार्थी को कक्षा–कक्ष और परिवार–समाज में शुद्ध उच्चारण सुनने के लिए अधिक से अधिक अवसर प्राप्त होने चाहिए। लेकिन यह तभी संभव होगा जब एक शिक्षक का अपना स्वयं का उच्चारण शुद्ध हो।

ब्रुकनेर ने वाचन संबंधी दोष और उनके उपचार पर कई प्रयोग किये हैं। इन प्रयोगों के आधार पर उसने अनेक परीक्षाओं का निर्माण किया है, जिनके द्वारा वाचन संबंधी दोषों का परिज्ञान किया जा सकता है व उपचार के लिए परामर्श प्रदान किया जा सकता है। श्री मैन्जिल[1] ने उच्चारण दोष, उनके कारण और उपचारों के विषय में लिखा है–

शिक्षक भाषा शिक्षण में गद्य और कविता पाठों के आदर्श वाचन प्रस्तुत करता है तथा अपने शिक्षण के द्वारा विद्यार्थी को शुद्धता से परिचित कराने का प्रयत्न करता है। साथ ही विद्यार्थी को भी अपने उच्चरण पर विशेष ध्यान देते रहना चाहिए। जहां कहीं भी उसे अपना उच्चारण अशुद्ध लगे, उसका तुरंत सुधार करना चाहिए। छात्र एवं शिक्षक दोनों को ही इस बात का एहसास होना चाहिए कि भाषा में अशुद्धि उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व को नकारात्मक रुप से प्रभावित करती है शुद्ध उच्चारण भाषा विकास का एक आवश्यक एवं अनिवार्य अंग है और इसके लिए आवश्यक है कि शिक्षक और विद्यार्थी दोनों ही अपने उच्चारण के प्रति सजग और जागरूक रहें।

(Footnotes)

[1] Wind pipe श्वास नलिका, Larynx,Vocal स्वर यन्त्र, Chords स्वरतंत्रिका, Epiglottis अभिकाकल, Uvulva कौवा, Nasal Cavity नासिका विवर, Guttur कण्ठ, soft palate कोमल तालु, Hard Palate मुर्द्धा, teeth-ridge वत्स, उपर के दॉत, नाक, निचला ओष्ठ, और जिव्हा,

हमारे लेखक

हंसराज पाल
प्रो. इमेरिटस यू.जी.सी.
आचार्य एवं पूर्व–संकायाध्यक्ष
शिक्षा अध्ययनशाला
देवी अहिल्या विश्वविद्यालय
इन्दौर, मध्य प्रदेश

संतोष एस्के
शोधार्थी
शिक्षा अध्ययनशाला
देवी अहिल्या विश्वविद्यालय
इन्दौर, मध्य प्रदेश

दीपक कुमार योगी
असिसटेन्ट प्रोफेसर स्कूल ऑफ रुरल मैनेजमेन्ट
आई.आई.एच.एम.आर. विश्वविद्यालय
जयपुर, राजस्थान

उमेश चमोला
शिक्षक–प्रशिक्षक
राजीव गांधी नवोदय विद्यालय भवन
अनालापानी, देहरादून
राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद्, उत्तराखण्ड

रत्ना गुप्ता
209 ए, उजाला अपार्टमेंट
सेक्टर 20, इन्दिरा नगर
लखनऊ
उत्तर प्रदेश – 226 016

वर्ष 61 अंक 3

ISSN 2231-2439

जुलाई–सितम्बर 2017

प्रौढ़ शिक्षा

प्रौढ़, सतत एवं आजीवन शिक्षा जगत
का मुख पत्र

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

प्रौढ़ शिक्षा जुलाई–सितम्बर 2017, आरएनआई 4551/57

कामनाएं समुद्र की भांति अतृप्त हैं। पूर्ति का प्रयास करने पर उनका कोलाहल और बढ़ता है।

– स्वामी विवेकानंद

स्वत्वधिकारी भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ के लिए डा. मदन सिंह द्वारा 17–बी आई पी एस्टेट, नई दिल्ली–2 से प्रकाशित, सम्पादित और उनके द्वारा प्रभात पब्लिसिटी 2622 कूचा चालान, दरियागंज, नई दिल्ली–2 से मुद्रित ।

सम्पादकः डा. मदन सिंह

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

1939 में स्थापित भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ का उद्देश्य शिक्षा के माध्यम से व्यक्ति के जीवन की गुणवत्ता में अभिवृद्धि करना है, जिसे यह निरंतर तथा आजीवन प्रक्रिया के रूप में देखता है। संघ प्रौढ़ शिक्षा को एक प्रक्रिया, कार्यक्रम और आन्दोलन के रूप में गतिशील बनाने की दिशा में प्रतिबद्ध है। संघ शिक्षा के प्रसार में कार्यरत स्वंयसेवी संगठनों, विश्वविद्यालयों, शासकीय, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं के कार्यकलापों में समन्वय करता है। संगोष्ठियों एवं सम्मेलनों का आयोजन और प्रौढ़ शिक्षा के विभिन्न आयामों पर निरंतर सर्वेक्षण तथा शोध के साथ, संघ अपने सदस्यों की प्रौढ़ शिक्षा तथा आजीवन अधिगम विषयक जानकारी में नवीनता एवं प्रखरता बनाए रखने के लिए समूचे विश्व में अद्यतन विचार और अनुभव प्रस्तुत करने का सतत् प्रयत्न करता रहता है। प्रौढ़ शिक्षा के विविध क्षेत्रों में अनुसंधान हेतु विभिन्न प्रयोगात्मक परियोजनाएं भी संचालित करता है। अपनी नीतियों के अनुसरण में संघ ने प्रौढ़ शिक्षा में उत्कृष्ट कार्य हेतु 'नेहरू साक्षरता पुरस्कार' एवं 'टैगोर साक्षरता पुरस्कार' की स्थापना की है।

डा. जाकिर हुसैन स्मृति व्याख्यान प्रतिवर्ष किसी मूर्धन्य शिक्षाविद् द्वारा दिया जाता है। संघ हिन्दी और अंग्रेजी में शोघ कार्य के लिए डा. मोहन सिंह मेहता फेलोशिप भी प्रदान करता है। संघ का अमरनाथ झा पुस्तकालय प्रौढ़, सतत् और जनसंख्या शिक्षा की संदर्भ सामग्री की दृष्टि से देश में अद्वितीय है। विविध संदर्भ–पुस्तकों के संकलन के अतिरिक्त देश और विदेश से प्रकाशित प्रौढ़ शिक्षा और आजीवन अधिगम संबंधी पत्र–पत्रिकांए, सूचना एवं सदर्भ सामग्री भी संघ के पुस्तकालय में उपलब्ध हैं। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कार्य हेतु संघ की पहल पर प्रौढ़ एवं जीवनपर्यन्त शिक्षा का अन्तर्राष्ट्रीय संस्थान (इंटरनेशलन इंस्टीट्यूट ऑफ एडल्ट एंड लाईफलॉंग एजूकेशन) की स्थापना वर्ष 2002 में हुई। संघ प्रौढ़ शिक्षा और आजीवन अधिगम विषय पर पुस्तकें तथा पत्रिकाएं प्रकाशित करता है, जो कि मुख्यतः प्रौढ़ शिक्षा कर्मियों और उसमें रुचि रखने वाली संस्थाओं और व्यक्तियों के लिए है। संघ 'इंटरनेशलन फेडरेशन आफ वर्कर्स एजूकेशन एसोसिएशन्स', एवं एशियन साउथ पैसेफिक एसोसिएशन फॉर बेसिक एण्ड एडल्ट एजूकेशन', 'इंटरनेशनल कौंसिल आफ एडल्ट एजूकेशन तथा 'इंटरनेशनल रीडिंग ऐसोसिएशन' से भी सम्बद्ध है। संघ की सदस्यता उन सभी व्यक्तियों एवं संस्थाओं के लिए खुली है, जो इसके आदर्शों एवं लक्ष्यों में विश्वास रखते हैं और इस क्षेत्र में कार्य करने के लिए इच्छुक हैं।

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
17–बी इन्द्रप्रस्थ एस्टेट, महात्मा गांधी मार्ग, नई दिल्ली–110002
दूरभाषः 011–23379282, 23378436, 23379306
फैक्सः 011–23378206, ई–मेलः directoriaea@gmail.com
Website: www.iaea-india.org; www.iiale.org

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

कार्यकारिणी समिति

संरक्षक
प्रो. भवानीशंकर गर्ग

अध्यक्ष
श्री कैलाश चौधरी

उपाध्यक्ष
डा. एम.एस. राणावत
श्रीमती राजश्री बिस्वास
प्रो. एस. वाई. शाह
सुश्री निशात फारूख
डा. वी. रेघु

महासचिव
डा. मदन सिंह

कोषाध्यक्ष
डा. पी. ए. रेड्डी

संयुक्त सचिव
श्री एस. सी. खण्डेलवाल

सह–सचिव
श्री ए. एच. खान
डा. एल. राजा
डा. सरोज गर्ग
श्री मृणाल पन्त

सदस्य
सुश्री आशा वर्मा
डा. उषा राय
डा. डी. के. वर्मा
श्री दुर्लभ चेतिया
डा. डी. उमा देवी
श्री हरीश कुमार एस.
श्री दिलीप मुखोपाध्याय
प्रो. असोक भटट्ाचार्य
श्री राजेन्द्र जोशी

सहयोजित सदस्य
श्री हरीशचन्द्र पारिख
श्री दिलीप मुखोपाध्याय
डा. भारती जोशी
श्री वी. बालासुब्रमनियण
श्री यशवंत जनानी